चन्दामामा
अगस्त १९९६
Rs 6

जीवन में हो उमंग, मधुरता के संग.

तुलसी रोपूं अपने अंगना
इसकी वृद्धि कभी रुके ना

अंधे चाचा कंवर बेचारे,
माता-पिता सा मुझे दुलारें
मैं भी उनके साथ जाउंगी,
उनको सड़क पार कराउंगी.

अरे हां! डैडी को हो गया है फ्लू,
और मम्मी ने कहा है कि मैं उन्हें
दवा पिला दूं.

छुट्टी ले मंगूबाई की मौज
बर्तनों की जुटी है फौज
कहाँ से आई इतनी आफत
मेरी, राधा मौसी की मुसीबत

जब तक पेटू राजू आए
काजू बरफी मेरी चट कर जाए
उससे पहले स्मिता खाले
चाहे मुझे बिल्कुल न मिले.

टॉमी जब भी करता मस्ती
उसको चोट बहुत है लगती
डॉक्टर की दी दवा लगाऊँ
उसके जख्मों को सहलाऊँ

राजीव अंकल सुधारें कार
मेरी मदद उन्हें दरकार
मैंने उनका हाथ बंटाया
मम्मी सोचें काम बढ़ाया

चंद्रा टीचर पढ़ातीं हिसाब
मैंने उनको दिए गुलाब
कितने, इसका नहीं हिसाब

मीठी-मीठी कामयाबी का रस... बरसों-बरस.

चन्दामामा

अगस्त १९९६

एक प्रति : ६.००

वार्षिक चन्दा : ७२.००

"मेरि"
दुनिया भर की नारियों को, 31 से अधिक सालों से मनमोहक, खूबसूरत और मजबूत स्वर्णपट्टित ज़ेवरों से सँवार रहे हैं।
मेरि अब पेश करते हैं चकाचौंध करने वाले रंगबिरंगे और उत्तम डिज़ाइन के ज़ेवर, जो शुद्ध चाँदी पर सोने का पानी चढ़ा कर और अमरीकी हीरो (A.D) से जड़ा कर बनाये गये हैं।
ज़ेवर वी.पी.पी. द्वारा मँगाये जा सकते हैं। हमें ज़ेवर की संख्या का उल्लेख देते हुये लिखिये। मंदिर की मूर्तियो और भरत नाट्यम के लिए ज़ेवर बनाना हमारी विशेषता है। मुफ्त रंगीन सूचापत्र के लिये लिखिये। कृपया पत्रव्यवहार हिन्दी या अंगरेज़ी में ही करिये।
No:193 Rs. 300/50
No:154 Rs. 300/50
No:152 Rs. 200/50
No:204 Rs. 250/50
No:257 Rs. 350/50
No:232 Rs. 300/50
No:8 Rs. 200/50
No:123 Rs. 200/50
No:214 Rs. 300/50
No:37 Rs. 200/50
No:952 Rs. 500/50
A. D.
No:86 Rs. 400/50
A. D.
No:834 Rs. 450/50
A. D.
No:862 Rs. 700/50
A. D.
No:876 Rs. 400/50
No:49 Rs. 400/50
A. D.
No:830
Rs. 1250/50
A. D.
No:916 Rs. 300/50
MERI GOLD COVERING WORKS
P.O. Box 1405, 18, Ranganathan Street, T. Nagar,
Madras 600 017, Phone: 444671, 442513
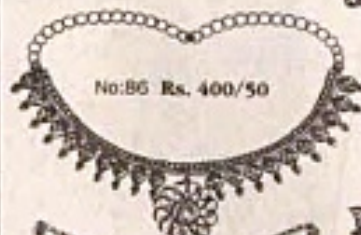
JUST RELEASED

The first set of **Chandamama Books,** splendid in their content, illustrations, and production, is now ready.
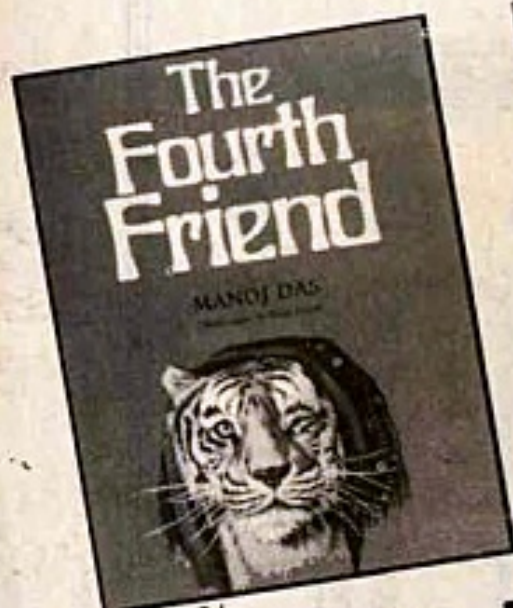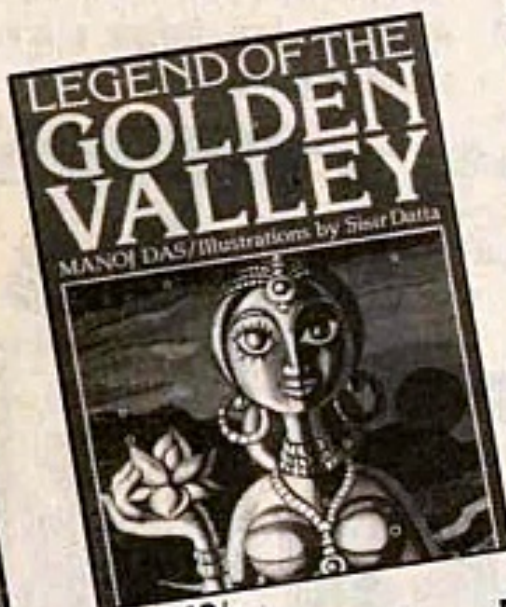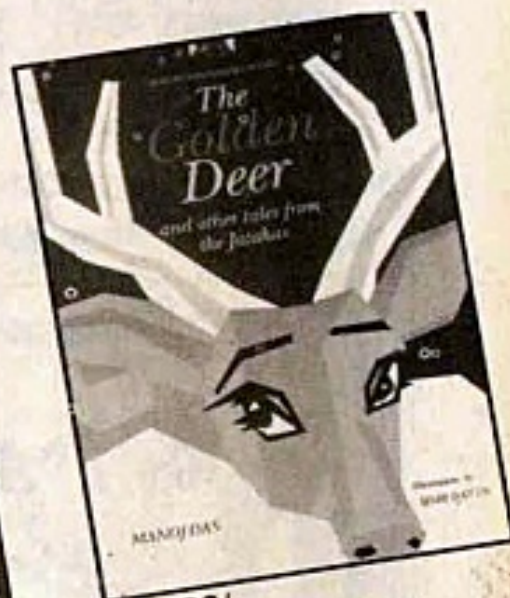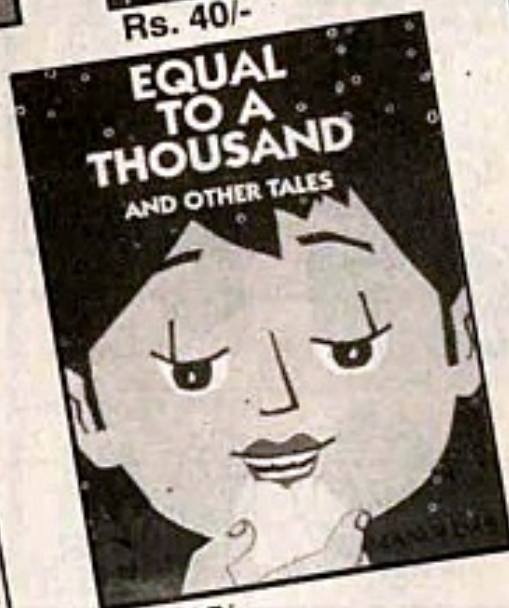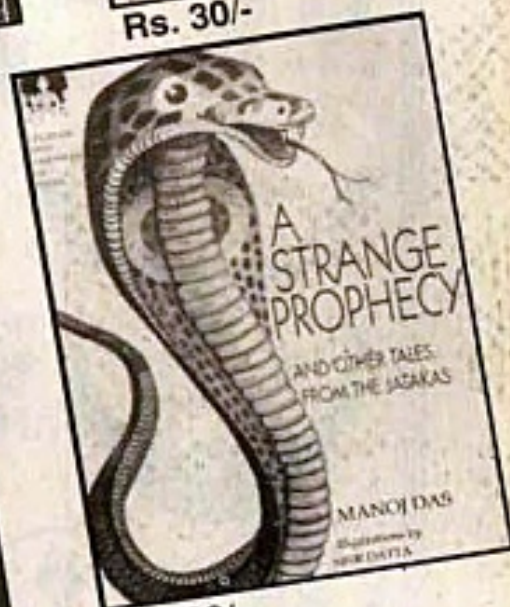
Discount for members of
Chandamama Young Scholars Club.

For details, write to :

CHANDAMAMA BOOKS
Chandamama Bldgs.
Vadapalani, Madras - 600 026.

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'

संचालक : नागिरेड्डी

एकसमान शिक्षा की आवश्यकता

जहाँ माता-पिता अपने बच्चों के लिए पाठशालाओं में प्रवेश पाने में कठिनाइयाँ महसूस कर रहे हैं, वहीं कुछ अध्यापक अपनी पाठशालाओं में भर्ती करने के लिए अधिकारियों के निर्देशानुसार विद्यार्थियों की खोज में लगे हुए हैं। यह विरोधाभास सचमुच ही आश्चर्यजनक है।

ये निर्देश यों हैं :- कक्षा में कम से कम ३२ विद्यार्थी हों। पचास से अधिक होने पर दो विभाजन हों। विद्यार्थी अगर ९० हों तो तीन विभाजन हों। इस प्रकार संख्या को दृष्टि में रखकर विभाजन होते रहें। जिस स्कूल में केवल प्राथमिक कक्षाएँ ही हों, वहाँ चार विभाजन हों और कम से कम कुल १०० विद्यार्थी हों। इन पाठशालाओं में प्रधानाध्यापक को भी मिलाकर चार अध्यापक हों। अगर ऐसी पाठशालाओं में १०० से कम विद्यार्थी हों तो उसकी अर्थ-व्यवस्था में सतुलन नहीं होगा और हो सकता है, पाठशाला बंद करनी पड़े। इससे चारों अध्यापकों की नौकरी छिन जायेगी। इसलिए अध्यापकों का तीव्र प्रयत्न जारी रहता है कि वे इस संख्या में विद्यार्थियों को भर्ती कर सकें, ताकि उनकी नौकरी सुरक्षित रहे।

पाठशालाओं में भर्ती होने के लिए उत्सुक विद्यार्थी क्या ऐसी पाठशालाओं में भर्ती किये नहीं जा सकते? इस सवाल का जवाब माता-पिताओं पर ही निर्भर है। क्योंकि वे चाहते हैं कि उनके बच्चे अंग्रेजी माध्यम की पाठशालाओं में ही प्रवेश पावें। निजी संस्थाओं द्वारा चलायी जानेवाली तथाकथित 'सार्वजनिक पाठशालाएँ' में इसकी गुंजाइश है। भारतीय नगरों व शहरों में यह स्पष्ट दृष्टिगोचार होता है।

निजी अथवा सार्वजनिक पाठशालाओं की शिक्षा-पद्धति एकसमान हो, जिससे पाठशालाओं में प्रवेश की समस्या गंभीर नहीं होगी। इसी से समान विभाजन होगा और हर विद्यार्थी पाठशाला में भर्ती हो पायेगा।

वर्ष : ४९ | अगस्त १९९६ | अंक : १२

एक प्रति : रु. ६/- | वार्षिक चन्दा : रु ७२/-

चन्दामामा
चांदोबा
CHANDAMAMA

समाचार-विशेषताएँ
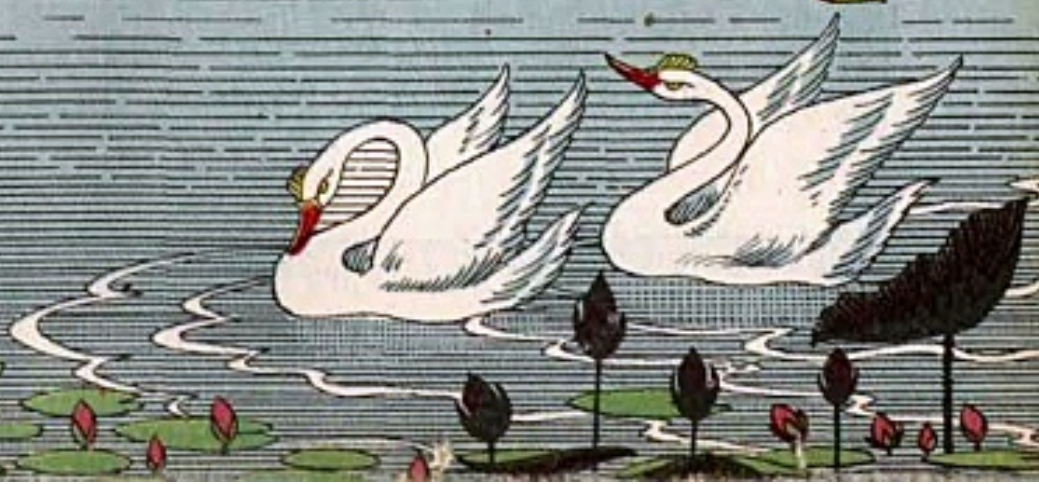
नये प्रधानमंत्री

अप्रैल और मई में हमारी लोकसभा के ५४३ स्थानों के लिए चुनाव संपन्न हुए । असम, हरियाना, केरल, तमिलनाडु, पश्चिम बंगाल तथा केंद्र-शासित पाँडिचेरी की विधान सभाओं के भी चुनाव हुए । विधान सभाओं के कुल स्थान हैं ९१४. थोडी-बहुत अवांछित घटनाओं के अलावा चुनाव प्रशांत ही रहे । चारों राज्यों तथा पाँडिचेरी में शासन-पक्षों की हार हुई। पश्चिम बंगाल में शासन-पक्ष वामपंथ दलों की ही पुनः जीत हुई ।

केंद्र में भी सरकार परिवर्तित हुई । शासन-पक्ष कांग्रेस १४० स्थानों पर ही विजय पा सकी । भारतीय जनता पार्टी को, कांग्रेस से २१ अधिक स्थान मिले । फिर भी सरकार बनाने के लिए बहुमत वह प्राप्त नहीं कर सकी । किसी एक प्रत्येक दल को सरकार बनाने में सफलता प्राप्त नहीं हुई । इस कारण 'हंग' लोकसभा बनी ।

लोकसभा के इन चुनावों में जनतादल को ४६, उभय कम्यूनिस्ट दलों को ४४ स्थान प्राप्त हुए । सत्रह क्षेत्रीय दलों तथा स्वतंत्र उम्मीदवारों को कुल मिलाकर १५६ स्थान प्राप्त हुए ।

कुछ क्षेत्रीय दलों ने भारतीय जनता पार्टी का समर्थन किया । अत्यधिक संख्या में जीते उस दल के नेता श्री अटल बिहारी बाजपेयी को राष्ट्रपति ने सरकार बनाने के लिए आह्वानित किया । मई, पंद्रह को भारतीय जनता पार्टी ने सरकार बनायी । राष्ट्रपति की दी गयी निश्चित अवधि के अंदर, भारतीय जनता पार्टी अपना बहुमत साबित नहीं कर पायी, जिससे उसे इश्तीफ़ा देना पड़ा । उसकी यह सरकार तेरह दिनों तक ही बनी रही ।

अब जनतादल, वाम पक्ष, तथा प्रधान क्षेत्रीय दलों ने मिलकर 'युनैटेड फ्रंट' बनाया । इस फ्रंट ने कांग्रेस के समर्थन का आश्वासन लेकर सरकार बनायी । कर्नाटक राज्य के जनतादल के मुख्य मंत्री श्री हेच.डी. देवेगौडा को, फ्रंट ने अपना नेता चुना। वे हमारे देश के बारहवें प्रधानमंत्री बने । जून, पहली तारीख को उन्होंने यह कार्य-भार संभाला । ग्यारह दलों के इस संकीर्ण सरकार का वे नेतृत्व कर रहे हैं ।
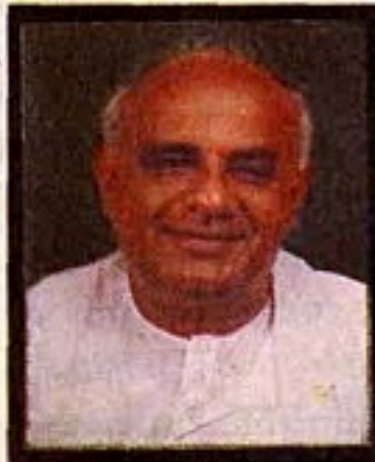
श्री देवेगौडा १९३३ में कर्नाटक राज्य के एक कुग्राम में किसान परिवार में जन्मे । सिविल इंजनीयरिंग में इन्होंने उपाधि पायी और कुछ समय तक वे सिविल ठेकेदार रह चुके ।

उपरांत इन्होंने राजनीति में प्रवेश किया । धीरे-धीरे वे पनपते गये और १९६२ में कांग्रेस के विधायक बने । १९८३ में कर्नाटक में बनी ग़ैर कांग्रेस की सरकार में मंत्री हुए । १९९१ में समाजवादी दल के उम्मीदवार बनकर हासन से लोकसभा के लिए निर्वाचित हुए । १९९४ में जो चुनाव हुए, उनमें उन्होंने जनतादल का नेतृत्व-भार संभाला और कर्नाटक के मुख्य मंत्री हुए । उस पद को उन्होंने सत्रह महीनों तक संभाला । अब 'युनैटेड फ्रंट' से गठित सरकार के वे भारत के प्रधान मंत्री हैं ।
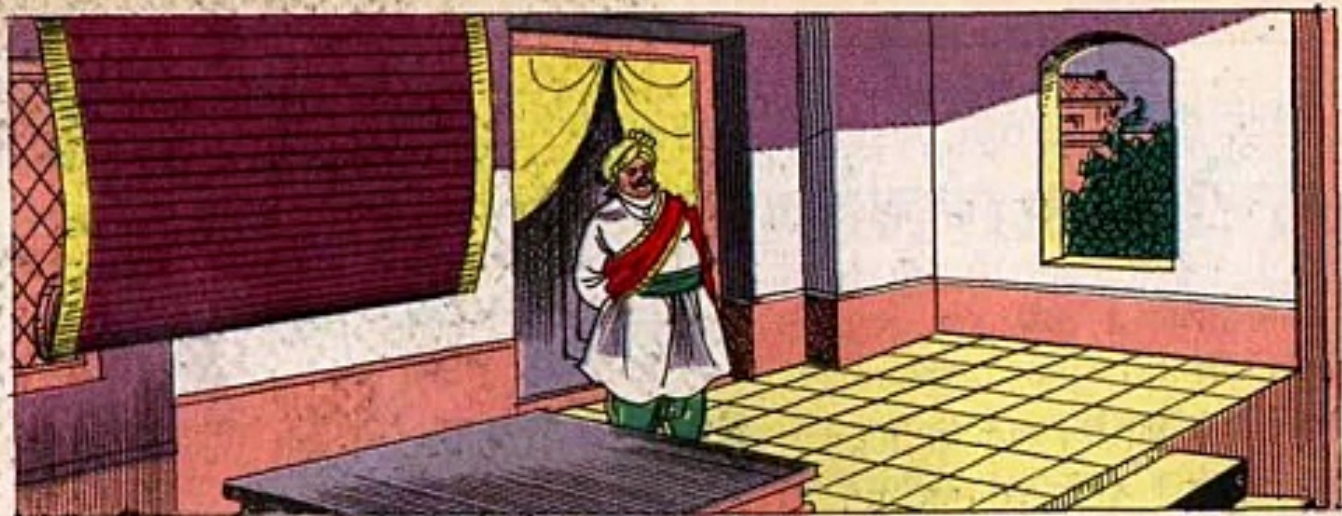
विश्वंभर का न्याय

नवनीत नामक गाँव में नरेश नामक एक भाग्यवान रहा करता था। उसका अपना आलीशान महल था। बेशुमार ज़मीनें थीं। जो भी काम वह करता, उससे उसे लाभ ही पहुँचता था। इसलिए सभी उसे अत्यंत भाग्यशाली कहते रहते थे।

गोपाल नामक एक व्यक्ति उस गाँव में रहने आया। यद्यपि लक्ष्मी उसपर प्रसन्न नहीं थी, पर उसे सरस्वती का आशीर्वाद प्राप्त था। वह बडा बुद्धिमान था। कहते हैं कि आप भला तो जग भला। और हुआ भी यही। गाँव में रहने आये एक महीना भी पूरा नहीं हुआ कि इतनी कम अवधि में उसने उस गाँव में बहुत अच्छा नाम कमाया। लोगों से उसकी व्यवहार-शैली बहुत ही मीठी होती थी। किन्तु इस कम अवधि में उसकी मुलाक़ात नरेश से नहीं हो पायी।

परंतु गोपाल के बारे में ग्रामीणों के द्वारा नरेश सारी बातें जानता रहता था। उसका, उससे मिलने न आना उसे खटकता था। आख़िर उसने अपने आदमी के द्वारा ख़बर भिजवायी और उसे अपने पास बुला लिया। तब गोपाल ने नरेश से पूछा "मैं ही किसी दिन आपसे मिलने आनेवाला था, पर इतने में आप ही ने बुला लिया। जान सकता हूँ, मुझे बुलाने का क्या कारण है ?"

"सुना कि आपको पैसों की तंगी है। जानता हूँ, आत्माभिमानी कभी भी यह स्वयं अन्यों से प्रकट नहीं करते। पर आपको अपना समझकर आपकी सहायता करने की इच्छा रखता हूँ। मुझसे आप धन लेंगे तो मेरा भाग्य भी आपकी उन्नति में सहायक सिद्ध होगा।" नरेश ने कहा।

गोपाल ने हाथ जोड़ते हुए कहा "आपकी बातों में मेरे प्रति आपका प्रेम व

लक्ष्मी कामत

आत्मीयता भरे हुए हैं। मैं बहुत ही खुश हूँ। मैं उन मानवों में से हूँ, जो अपने ही भाग्य के बल पर उन्नति के मार्ग पर अग्रसर होना चाहते हैं। इसलिए मैं आपसे धन नहीं लूँगा। आगे से हमारी बातों या व्यवहार में, धन शब्द का उपयोग ही न हो। हम प्रेम से एक दूसरे से मिलते रहें। हमारे व्यवहार में आत्मीयता सदा बनी रहे।''

गोपाल परिवार सहित किराये के घर में रहने लगा। दो सालों के बाद एक घर खरीद लिया। दो और सालों में उसने पाँच एकड़ की ज़मीन खरीद ली। धीरे-धीरे वह धन समेटता गया। दस सालों के अंदर वह नरेश की बराबरी का संपन्न हो गया।

गोपाल अक्सर दूर-प्रदेशों में जाता और पंडितों की सभाओं और चर्चाओं में भाग लेता था। यों वह काफ़ी धन भी कमाता था। चूँकि वह महान पंडित था, इसलिए उसकी आमदनी भी दिन-ब-दिन बढ़ती रही। इस स्थिति में नवनीत गाँव में एक राजदूत आया। उसने घोषणा की कि ''हफ़्ते भर में सोने की पालकी गोपाल को राजधानी ले जाने आयेगी। वहाँ गोपाल का राज-सम्मान होगा। महाराज की दृष्टि में गोपाल एक महान पंडित हैं।''

गाँव भर में यह बात फैल गयी और सब इसी की चर्चा करने लगे। देखते-देखते गाँव भर में गोपाल के प्रति आदर-भाव बढ़ गया। गोपाल ने स्वयं यह बात नरेश से बतायी। यह सुनकर उसका चेहरा पीला पड़ गया और यह कहते हुए वह अंदर चला गया कि मुझे सर-दर्द हो रहा है। उसके व्यवहार पर गोपाल को आश्चर्य तो हुआ, पर यह उसके लिए नया नहीं था, इसलिए यह सोचकर चुप रह गया कि नरेश का स्वभाव ही ऐसा है। जिस दिन सोने की पालकी आयी, उस दिन गाँव के सब लोग गाँव की सरहद तक आये और गोपाल को बिदा किया। नरेश अस्वस्थता का बहाना बनाकर नहीं गया।

राजधानी में गोपाल का सम्मान बडे पैमाने पर हुआ। राजा ने उससे कहा ''महाशय, नवनीत गाँव का कोई ग्रामाधिकारी अब तक नियुक्त नहीं हुआ है। पड़ोस के गाँव का अधिकारी ही दोनों गाँवों का काम संभाल रहा है। अब से आप ही उस गाँव के अधिकारी होंगे।''

गोपाल ने नकारात्मक ढंग से अपना सर हिलाते हुए कहा ''प्रभू, पांडित्य अपनी जगह पर है तो शासन-भार अपनी जगह पर। दोनों अलग-अलग हैं। नवनीत गाँव में मेरा प्रिय मित्र नरेश है। वह केवल समर्थ ही नहीं बल्कि भाग्यवान भी है। मेरा विश्वास है कि उसके अधिकार-काल में जनता सुखी रहेगी। वह भाग्यबान है। गाँव भी उसके भाग्य का भागीदार बना रहेगा।''

राजा ने उसकी सलाह मान ली। उसने तुरंत एक पत्र नरेश के नाम लिखवाया और उसे नरेश को सौंपने की जिम्मेदारी उसी को सौंपी।

गोपाल के आने के पहले ही यह समाचार गाँव में फैला। लोगों ने गोपाल की निस्वार्थता की भरपूर प्रशंसा की। किन्तु कुछ लोगों ने अपना अभिप्राय व्यक्त करते हुए कहा ''नरेश आदमी तो अच्छा है, पर मुँह में जो आता है, बक देता है। इससे अच्छा यही होता कि गोपाल ही गाँव का अधिकारी हो।''

राजधानी से लौटने के बाद गोपाल ने नरेश को राजा का पत्र दिया और कहा ''मेरा मित्र ग्रामाधिकारी बना, इसका मुझे गर्व है। मुझे इसकी बड़ी खुशी है।'' नरेश ने पहली बार गोपाल को अपनी कृतज्ञता व्यक्त की।

दिन ब दिन राजा गोपाल के पांडित्य के प्रति आकर्षित होता जा रहा था। वह अक़्सर गोपाल को राजधानी बुलवाने लगा। जब कभी भी वह जाता, तब ग्रामीणों की समस्याओं पर राजा को अपना मत व्यक्त करता था। तब राजा फ़ौरन उन समस्याओं का परिष्कार-मार्ग सुझाता था। वापस आने के बाद राजा के सुझाये मार्ग के बारे में वह गोपाल को सुनाता तो नरेश आँखे लाल करके कहता ''ग्राम की समस्याओं के बारे में राजा से तुमने क्यों कहा? इस गाँव के अधिकारी तुम हो या मैं? जो हुआ, सो हुआ। आगे कभी तुमने ऐसा किया तो याद रखो, मैं इस पद से इश्तीफ़ा दे दूँगा।''

''किसी के द्वारा ही सही, ऐसा हुआ भी तो इससे तुम्हें क्या नुक़्सान पहुँचेगा। इससे गाँव की भलाई होगी तो तुम्हें संतुष्ट होना चाहिये। मेरी सहायता से अपनी ज़रूरतें पूरी करो। गाँव की भलाई करो।'' गोपाल ने, नरेश को समझाने की कोशिश

की।

किन्तु नरेश ने हठपूर्वक कहा "मैं ग्रामाधिकारी हूँ। ग्रामीणों की अच्छाई-बुराई का ख्याल मैं रखूँगा। अपने पांडित्य के सिवा राजा से कोई और बातें न करो" नरेश ने ज़ोर देते हुए कहा। उसने यह भी कहा कि यह मेरी आज्ञा है।

उसकी बातों से स्पष्ट था कि नरेश को अपने पद का गर्व है और वह इसमें किसी का हस्तक्षेप पसंद नहीं करता। गोपाल को लगा भी कि उसकी बातों में कुछ हद तक सच्चाई भी है।

क्रमशः नरेश में गोपाल के प्रति असहनशीलता बढ़ती गयी। खेत का किराया समय पर चुकाया नहीं गया, उसके घर का एक हिस्सा निश्चित सीमा के आगे आ गया आदि कारण बताकर उसे सताया जाने लगा।

कुछ समय तक गोपाल चुपचाप सहता रहा। पर जब वह सह नहीं पाया तो उसने राजा से शिकायत की। राजा ने नरेश को चेतावनी दी। नरेश राजा को समझाने की स्थिति में नहीं था, क्योंकि वह जानता था कि ग़लती उसी की है। तब से गोपाल के प्रति उसका आक्रोश बढ़ गया।

ऐसे समय पर विश्वंभर नामक एक साधु उस गाँव में आया। हिमालय में तपस्या करके कुछ असाध्य शक्तियाँ उसने प्राप्त कीं। हफ़्ते में एक दिन वह लोगों की चाहें पूर्ण करता था। नरेश ने उसे अपने घर में आश्रय दिया।

इस अवसर का लाभ उठाकर उसने विश्वंभर से चाहा कि उसके प्रति राजा के दिल में अधिकाधिक प्रेम उत्पन्न हो और वह वही करे, जो वह चाहता है। और हुआ भी इसी प्रकार। अब नरेश राजा से

राजा से मिलते रहनेवाले उपहारों के रुक जाने से उसकी संपत्ति घटती गयी। उसकी परिस्थिति पर पसीजकर कुछ लोगों ने उससे कहा "आप विश्वंभर के आश्रय में जाइये। ऐसा करने पर आपको पुनः राजा का आदर प्राप्त होगा।" विश्वंभर की शक्तियों के बारे में गोपाल ने सुना था। किन्तु उसे अद्भुत शक्तियों पर विश्वास नहीं था। अपने कष्टों के बारे में राजा से बताने के लिए राजधानी गया। पर तब तक नरेश की बातों का असर राजा पर खूब पड़ चुका था। गोपाल को बताया गया कि नवनीत गाँव का कोई भी ग्रामीण नरेश के द्वारा ही राजा तक पहुँच सकता है और आप बीती सुना सकता है।

अधिक मिलने-जुलने लगा। उसने पहले गोपाल के विरुद्ध शिकायत करनी चाही, पर उसकी चाल नहीं चली, क्योंकि राजा आसानी से किसी की बातों में आनेवाले स्वभाव का नहीं था। इसलिए उसने राजा से कहा "पंडितों की आवश्यकताएँ कम होती हैं, पर सामान्यों की आवश्यकताएँ अधिक होती हैं। मेरी प्रार्थना है कि आप कुछ समय तक पंडितों की आवश्यकताओं पर ध्यान न दें और जनता के कल्याण पर अपनी दृष्टि केंद्रित करें।" फलस्वरूप अन्य पंडितों के साथ-साथ गोपाल को भी राजा से उपहार मिलने नहीं लगे।

गोपाल दानी था। वह स्वयं आराम से ज़िन्दगी गुज़ारता था और साथ ही दूसरों की भी उदारता से सहायता करता था।

गोपाल की समझ में नहीं आया कि ऐसी स्थिति में क्या किया जाए। वह मंत्री से मिला और पूरी बात बतायी।

गोपाल की विद्वत्ता पर मंत्री बहुत ही प्रसन्न हुआ और कहा "कहिये, मैं आपके लिए कुछ भी कर सकता हूँ।"

गोपाल ने उसे एक संदेश लिखकर दिया और कहा "आप राजा से यह न कहिये कि मैंने यह लिखा है। मैंने इसमें लिखा है कि सामान्यों को पंडितों से बहुत ही लाभ होते हैं। साथ ही मैंने यह भी लिखा है कि पंडितों की आवश्यकताओं की पूर्ति करने पर राज्य को भी बहुत लाभ होता है। आप राजा को यों सुनाइये मानों आप स्वयं राजा को समझा रहे हों।"

मंत्री के सुनाने पर राजा ने ध्यान से संदेश सुना। उसे अपनी त्रुटि का एहसास

हुआ और निर्णय किया कि हर गाँव में एक पंडित नियुक्त हो। इसके लिए पंडित अपने बारे में विवरण दे सकते हैं। जो पंडित अपने ग्रामाधिकारी द्वारा विवरण भेजेंगे, उन्हें प्रधानता दी जायेगी।

नवनीत गाँव को भी इसकी सूचना दी गयी। नरेश को पसंद पंडित के बारे में विवरण भेजे गये। यह जानकर गोपाल ने अपने बारे में विवरण राजा को सीधे भेजा।

"राजा आपको बहुत चाहते हैं। पंडितों की नियुक्ति के बारे में भी उन्होंने आपसे सलाह नहीं ली। आपकी नियुक्ति के बारे में उन्होंने ध्यान ही नहीं दिया। कोई दुष्ट शक्ति आपके विरुद्ध काम कर रही है। इसीलिए अच्छा यही होगा कि आप विश्वंभर से एक बार मिल लें" कुछ हितैषियों ने उसे सलाह दी।

पता नहीं, क्यों उन हितैषियों की सलाह गोपाल को सही लगी, वह विश्वंभर से मिला और अपनी समस्या बतायी।

विश्वंभर कुछ कहने ही वाला था कि इतने में वहाँ उपस्थित नरेश ने कहा "स्वामी, यह आप पर विश्वास नहीं रखता। अब तक एक भी बार इसने आपका दर्शन नहीं किया। स्वार्थ से प्रेरित होकर वह यहाँ आया है।"

"मेरे पास जो भी आते हैं, स्वार्थवश ही आते हैं। मुझे व्यक्तियों तथा उनकी समस्याओं से कोई संबंध नहीं। उनकी न्यायोचित इच्छाओं की पूर्ति करना मेरा धर्म हैं।" विश्वंभर ने गंभीरता से कहा। फिर गोपाल से उसने पूछा "पुत्र, परसों

मुझसे मिलने आओ।"

यह सुनते ही नरेश घबरा गया। उसने सोचा, ऐसे ही गोपाल मेरी परवाह ही नहीं करता और अगर वह राजपंडित हो जाए तो उसकी दृष्टि में मेरा कोई मूल्य ही नहीं होगा। विश्वंभर का आशीर्वाद अचूक है। इसलिए इसे रोकने का कोई उपाय निकालना चाहिये।"

वह दिन आ ही गया, जिस दिन विश्वंभर, गोपाल को आशीर्वाद देनेवाला था। विश्वंभर ने गोपाल से कहा "तुम जो पाना चाहते हो, मन में कह लो। तुम्हें वह अवश्य प्राप्त होगा।"

गोपाल ने मन ही मन चाह लिया कि मैं राजपंडित बनूँ। फिर इसके बाद नरेश वहाँ आया। विश्वंभर ने नरेश से भी वही

बताया, जो उसने गोपाल से बताया था। तुरंत नरेश ने मन ही मन चाहा कि गोपाल राजपंडित न बने।

परंतु उसमें संदेह जगा और उसने विश्वंभर से पूछा "स्वामी, पारस्परिक विरोधी इच्छाओं की पूर्ति जब दोनों एक साथ चाहते हों तो आप किसकी इच्छा की पूर्ति करेंगे ?"

"किसी एक की ही इच्छा को पूर्ण कर सकता हूँ। जिसकी इच्छा मैं पूर्ण नहीं कर पाऊँगा उस दिन से उसका पतन निश्चित है।" विश्वंभर ने कहा।

उसके उत्तर से नरेश बहुत ही खुश हुआ। उसने ठान लिया कि अब से गोपाल का पतन होगा। किन्तु हफ़्ते के अंदर प्राप्त समाचार सुनकर वह हताश हो गया। गोपाल को राजपंडित का पद मिल गया।

नरेश दौडा-दौडा विश्वंभर के पास आया और कहा "स्वामी, कहते हैं कि मेरा भाग्य अचूक व अटूट है। मैंने सोचा कि आपके मेरे यहाँ रहने से वह दुगुना हो जायेगा, पर अब मुझे डर लगने लगा कि मेरा पतन शुरू होने जा रहा है। यह सब ऐसा कैसे हो गया?" रोते हुए उसने पूछा।

विश्वंभर ने हँसते हुए कहा "इसमें कोई संदेह नहीं कि तुम्हारी जीवन-रेखा भाग्यशाली है। जब तक अपने बारे में ही सोचते रहोगे, जब तक अपना ही सुख चाहोगे, तब तक तुम्हारा भाग्य बना रहेगा, तुम्हारे पतन का प्रश्न ही नहीं उठता। दूसरों को कष्ट पहुँचाकर, उनको नष्ट पहुँचाने की दिशा में जब से सोचना और करना शुरू करोगे, तब से तुम्हारा भाग्य पिघलता जायेगा और तुम्हारे पतन का प्रारंभ होगा। गोपाल की इच्छा अपने तक ही सीमित थी, पर तुम्हारी इच्छा तो उसको नष्ट पहुँचाने की थी। इसी कारण तुम्हारी इच्छा पूरी नहीं हुई। अपने पतन को रोकने की शक्ति तुझी में है। उपकारी को अपकार पहुँचाने की अपनी चिंतन-पद्धति बदल दो। अपनी बुद्धि का उपयोग सही दिशा में करो।"

अब गोविंद की आँखें खुल गयीं। तब से गोपाल से मैत्री-भाव से व्यवहार करता रहा। शांत जीवन गुज़ारने लगा।

१३

(रूपधर जीवित है या नहीं, निर्णय नहीं हो पा रहा था। बहुत-से राजकुमारों का दावा था कि वह मर चुका है। इसलिए वे उसके घर में आसन जमाये बैठे थे और उसकी पत्नी से विवाह करने के सपने देख रहे थे। वे उसपर दबाव भी डाल रहे थे कि उनमें से वह किसी से शादी करे। यह उससे और उसके बेटे से सहा नहीं गया। यह पीडा उनकी सहनशक्ति के बाहर हो गयी। रूपधर का नादान बेटा धीरमति अपने पिता के बारे में जानकारी प्राप्त करने के लिए नौका में निकल पड़ा। नवद्योत और प्रताप से मिलने गया।)- उसके बाद

इस बीच इथाका में रूपधर के घर में बैठे युवक राजकुमार निश्चिंत खा-पी रहे थे। जुआ खेलते हुए अपना समय व्यतीत कर रहे थे। उनको रोकनेवाला कोई नहीं था। इसलिए उन्हें अपने प्राणों का भय भी नहीं था। धीरमति को तो वे नादान व डरपोक बालक समझ रहे थे। उन्हें विश्वास था कि पद्ममुखी को झक मारकर उनमें से किसी से शादी करनी ही होगी। उन्हें मालूम नहीं था कि धीरमति पैलास गया हुआ है। घर के बाहर जुआ खेलने में रत उन दुष्टों के पास एक युवक ने आकर पूछा "क्या आप जानते हैं कि धीरमति पैलास से कब लौटेगाा? वह मेरी नौका ले गया है। अब मुझे उस नौका की सख़्त ज़रूरत है। मैं उस पार जाकर एक जंगली घोड़े को ले आना चाहता हूँ।"

सब एक दूसरे का मुख देखते रहे और आश्चर्य में डूब गये। दुर्बुद्धि ने उस युवक से पूछा "धीरमति पैलास गया? तुम्हारी

जानकारी के बिना ही तुम्हारी नौका की चोरी की या तुमसे पूछकर ही ले गया? यह सब कब हुआ? उस नौका के नाविक कौन हैं? धीरमति के नौकर हैं या नगर के युवक? जानते हो, वह किस काम पर पैलास गया? उसने क्या इसके बारे में तुमसे कुछ कहा?'' यों उसने प्रश्नों की बौछार कर दी।

''मेरी सम्मति लेकर ही वह नौका ले गया। इतने बड़े घर का लड़का पूछे और मैं न कर दूं। यह कैसे हो सकता है? मैंने उसके पूछते ही सहर्ष ही नौका उसके सुपुर्द की। नौका चलाने में कुशल नगर के ही युवक उसके साथ गये। सहन उनका नेता है।'' उस युवक ने दुर्बुद्धि को बताया।

दुर्बुद्धि की आँखें क्रोध से लाल हो गयीं। अपने अनुचरों की ओर मुडकर उसने कहा ''यह उसकी ज्यादती है। किसी उद्देश्य से ही वह वहाँ गया होगा। जिस दिन से उसने नागरिकों को बुलाकर हमारे बारे में बताया, हमारी शिकायत की, उसी दिन से मुझे शंका होने लगी कि वह हमें घर से निकाल देने की योजना बना रहा है। हम सबकी आँखों में धूल झोंककर यह छोकरा अपने साथ कुछ नाविकों को भी ले गया है। इसकी यह जुर्रत। फ़ौरन वायु-वेग से जा सकनेवाली एक नौका का प्रबंध करो। बीस नाविकों को इकट्ठा करो। मैं धीरमति का अंत देखकर ही दम लूँगा।'' फिर राजकुमारों ने आपस में चर्चाएँ कीं। उन्होंने फ़ैसला किया कि धीरमति जब लौटेगा तब रास्ते में ही उसे मार दिया जाए। दुर्बुद्धि को यह काम सौंपा गया।

उनके षडयंत्र की बात पद्ममुखी को नौकरों के द्वारा मालूम हुई। उसे अब तक मालूम ही नहीं था धीरमति पैलास गया था। दुष्टों के इस षड्यंत्र के समाचार ने उसे चौकन्ना कर दिया।

''घर में इतने नौकर हैं, पर क्या फ़ायदा? किसी ने भी मुझसे कहा नहीं कि मेरा बेटा यात्रा पर जा रहा है। अगर मुझे मालूम होता तो मैं किसी भी हालत में उसे जाने नहीं देती।'' कहकर पद्ममुखी रो पड़ी। उसके साथ-साथ सब नौकर भी रो पड़े। दादी माँ ने तब बता दिया कि धीरमति नहीं चाहता था कि आपको उसकी यात्रा के बारे में मालूम हो। वह चाहता था कि जब तक आप उसके बारे में न पूछें,

तब तक हम अपना मुँह बंद रखें।

"लगता है दुल्हन शादी की जल्दी में है, शायद इसीलिए रो रही है। बेचारी को मालूम नहीं कि उसके बेटे का अंत समीप ही है" एक दुष्ट ने व्यंग भरे स्वर में कहा। "तुममें से कोई भी कुछ भी नहीं बोलेगा। धीरमति की हत्या के बारे में हमारे अलावा किसी को भी कुछ भी मालूम होना नहीं चाहिये" दुर्बुद्धि ने कहा। और फ़ौरन बीस नाविकों को चुनकर वह समुद्री तट पर पहुँचा।

एक नौका में उन्होंने तलवारें व चाकू छिपा रखे और तट से दूरी पर धीरमति के आगमन की प्रतीक्षा करने लगे। खाना पकाया और खाने के बाद रात का इंतज़ार करने लगे।

पद्ममुखी ने उस दिन खाना ही नहीं खाया। उस रात को वह सो भी नहीं सकी। वह बिलख-बिलखकर रोती हुई कहने लगी कि मैं अपने बेटे को सजीव देख पाऊँगी या नहीं। उस समय अंधकार में उसे अपनी बहन का धुँधला आकार दिखायी पड़ा। वह कहने लगी "क्यों रो रही हो दीदी। तुम्हारे बेटे पर कोई विपदा नहीं आयेगी। शांत हो जाओ।" देखते-देखते वह ग़ायब हो गयी।

उसी रात को दुष्ट अपनी नौका को एक द्वीप में ले गये और वहाँ लंगर उतारकर धीरमति के आने की प्रतीक्षा करने लगे।

धीरमति ने प्रताप से बिदा ली और उससे अमूल्य भेंटें लेकर वापसी यात्रा के लिए निकल पड़ा। वह समुद्री तट पर पहुँचा, नाविकों से मिला और देवताओं को बलियाँ चढ़ायीं। फिर नौका में बैठ गया। पर वह नौका को सीधे नगर की ओर नहीं ले गया। एक और जगह पर वह नौका से उतर गया और उसने नाविकों से कहा "आप नगर चले जाइये। मैं अपने सुवरों के रखवाले से मिलकर वापस लौटूँगा।"

धीरमति रखवाले की झोंपड़ी के पास गया। तब रखवाला और रूपधर रसोई बना रहे थे। झोंपड़ी के बाहर कुत्तों ने जैसे ही धीरमति को देखा तो पहचान लिया और दुम हिलाते हुए उसपर कूद पड़े।

"कोई आया है। तुम्हारा जाना-पहचाना ही होगा। क्योंकि कुत्ते बिना भोंके ही उससे खेल रहे हैं" रूपधर ने सुवरों के

रखवाले से कहा ।

रूपधर की बातों के ख़तम होने के पहले ही धीरमति झोंपड़ी के द्वार पर आकर खड़ा हो गया ।

उसे देखते ही रखवाला आश्चर्य में डूब गया और अपने यजमान के पास दौड़ा-दौड़ा आया । उसे अपने आलिंगन में ऐसा लिया, मानों उसी का अपना बेटा किसी दूर देश से लौट आया हो । उसकी आँखों में आनंद के आंसू थे । उन दोनों के इस प्रेमपूर्ण मिलन को देखकर रूपधर अवाक् रह गया । रखवाले ने धीरमति से बड़े प्यार से कहा "आ गये बेटे । मैंने सोचा तक नहीं था कि तुम्हें देख पाऊँगा बेटे, अंदर आओ । तुम तो इस ग़रीब की झोंपड़ी में आते भी हो तो बहुत कम । सुना कि तुम पैलास गये थे । कब लौटे?" उसकी आँखों से आनंद के आँसू बहते ही रहे ।

"वहीं से आ रहा हूँ चाचा । हमारे घर के बारे में कुछ मालूम पड़ा? मेरी माँ सकुशल है न? कहीं किसी दुष्ट ने उससे विवाह तो नहीं किया?" धीरमति ने पूछा ।

"ऐसी कोई बात नहीं हुई बेटे । तुम्हारी माँ रात-दिन दुखी रहती है । पता नहीं, कब उसे उन दुष्टों से मुक्ति मिलेगी ।" रखवाले ने धीरमति के हाथ की बर्छी अपने हाथ में लेते हुए कहा ।

धीरमति को अंदर आता हुआ देखकर रूपधर अपने आसन से उठ खड़ा होने लगा तो धीरमति ने उससे कहा "उठना नहीं, बैठने के लिए और बहुत आसन हैं ।"

रूपधर फिर बैठ गया । रखवाले ने धीरमति के लिए एक चर्म बिछा दिया । फिर तीनों ने बैठकर खाना खाया ।

भोजन हो जाने के बाद धीरमति ने सुवरों के रखवाले से कहा "चाचा, ये नये आदमी कौन हैं? इन्हें यहाँ कौन ले आये?"

"बेटे, इसका कहना है कि यह क्रीट देश का है । लगता है कि भगवान ने इसके भाग्य में लिखा है कि पूरे विश्व में यात्रा करे, लोक-संचार करे ।

एक दुर्घटना से बचकर मेरी झोंपड़ी में शरण लेने आया है । इसे मैं तुम्हारे सुपुर्द कर रहा हूँ । फिर तुम्हारी इच्छा ।" रखवाले ने कहा ।

"चाचा, इस आदमी का भार सौंपकर तुमने मेरी परीक्षा ली । इस अतिथि को भला मैं कैसे घर ले जा सकूँगा । मैं हूँ

छोटा और घर भर हैं दुश्मन । वे सब माँ पर दबाव डाल रहे हैं कि हममें से किसी से शादी करो । वह बेचारी नित्सहाय होकर छटपटा रही है । उसका विश्वास है कि जल्दी ही उसके पति लौटेंगे । वह किसी निर्णय पर नहीं आ पा रही है । इसलिए मैं इस अतिथि को पहनने के लिए ज्यादा से ज्यादा कपड़े दे सकता हूँ । चप्पल दे सकता हूँ, तलवार दे सकता हूँ । वे जहाँ जाना चाहते हैं, अवश्य जाएँ । अच्छा यही होगा कि इन्हें अपनी ही झोंपड़ी में रखो और इनकी देखभाल करो । इन्हें जो खाना चाहिये, मैं भेजता रहूँगा । मैं नहीं चाहता कि ये उन दुष्टों के बीच रहें । वे इनको सताएँगे, कष्ट पहुँचायेंगे, ताने कसेंगे । इनका अपमान मुझसे बरदाश्त नहीं होगा ।'' धीरमति ने यों अपने विचार व्यक्त किये ।

बाद उसने रखवाले से कहा ''चाचा, तुम तुरंत मेरे घर जाना और माँ को बताना कि मैं पैलास से लौट आया हूँ और तुम्हारी झोंपड़ी में सकुशल हूँ । उससे बताना कि मेरे बारे में चिंता न करें ।''

''बेटे, मालूम हुआ कि जब से तुम गये, तब से तुम्हारे दादा ने कुछ भी नहीं खाया । उन्हें भी तुम्हारे लौटने की ख़बर दूँ । बेचारे वृद्ध जो हैं ।'' रखवाले ने पूछा ।

''तुम और कहीं न जाना । माँ से कहना कि मौक़ा पाकर वही ख़बर भिजवाये । तुम फ़ौरन यहाँ लौट आना ।'' धीरमति ने कहा ।

सुवरों का रखवाला निकल पड़ा । झोंपड़ी में बाप और बेटा मात्र रह गये ।

झोंपड़ी के बाहर अकस्मात् ही बुद्धिमति देवी प्रकट हुई और संकेत द्वारा रूपधर से बाहर आने को कहा । रूपधर अकेले ही बाहर आया । तब देवी ने उससे कहा

"अपने बेटे से बता देना कि तुम कौन हो। उसकी सहायता से अपने शत्रुओं के नाश का प्रारंभ कर दो। उन दुष्टों के अंत हो जाने का समय आसन्न हो गया। मैं तुम दोनों के पक्ष में हूँ। तुम्हें ड़रने की कोई आवश्यकता नहीं।" कहकर उसने अपनी लकड़ी से उसे धीरे से छुया।

छूते ही रूपधर के चेहरे की झुर्रियाँ गायब हो गयीं। उसने अब अपना निजी रूप पाया। उसका पहनावा भी बदल गया। परिवर्तित उस मनुष्य को देखकर धीरमति हक्का-बक्का रह गया। उसने पूछा "महोदय, आप कौन हैं? कोई देवता होंगे। सामान्य मनुष्य अपने इच्छानुसार अपना रूप बदलने की शक्ति नहीं रखते। यही नहीं, नरों के मुखों पर ऐसा अद्भुत तेजस्व नहीं होता।"

रूपधर ने अपना परिचय दिया।

"मैं तुम्हारा पिता हूँ। बेटे, वापसी यात्रा में मैंने अनेकों कष्ट सहे। आख़िर किसी प्रकार स्वदेश पहुँच पाया।" फिर उसने धीरमति को अपना पूरा किस्सा सुनाया और कहा "बताना कि हमारे घर में कितने दुष्ट मौजूद हैं। उन्हें हम ख़तम कर डालेंगे।"

"कुल मिलाकर वे एक सौ आठ हैं। इनके अलावा उनके छे नौकर हैं। इन सब को हम दोनों मात्र कैसे ख़तम कर पायेंगे?" धीरमति ने अपना संदेह व्यक्त किया।

"पगले, समझ रहे हो कि हम सिर्फ़ दो ही हैं। जानो कि हमारे साथ बुद्धिमति देवी भी है। सुबह तक तुम घर पहुँच जाना। भिखारी के वेष में मैं अपने सुवरों के रखवाले के साथ वहाँ आऊँगा। वे दुरात्मा चाहे मेरा कितना भी अपमान करें, चुपचाप सहते रहना। पर, मेरी ओर भी देखते रहना। मैं जब इशारा करूँगा, तब दीवार पर जो तलवारें, चाकू व भाले हैं, उन्हें ऊपर के कमरे के एक कोने में छिपा देना। अगर वे पूछें कि हथियार कहाँ हैं तो उनसे बताना कि जंग लग जाने के कारण कहीं छिपा रखा है। याद रखना, उनसे सविनय पेश आना। हमें जो हथियार चाहिये - दो भाले, दो तलवारें, चमड़े की दो ढालें कहीं पास ही सुरक्षित रखना। पीकर कहीं किसी से झगड़ा मत मोल लेना। ऐसा होने पर किया किराया मिट्टी में मिल जायेगा। एक और मुख्य बात। किसी को ख़बर न हो कि मैं

लौट आया। अपनी माँ से भी मत बताना। इस बात को छिपाये रखना बहुत ही आवश्यक है। यह बात सिर्फ़ हम दोनों तक ही सीमित हो।'' रूपधर ने अपने बेटे को यों समझाया।

इस बीच, पैलास से लौटी नौका नगर तक आ गयी। उन नाविकों में से एक रूपधर के घर आया। उस समय पर सुवरों का रखवाला भी वहाँ आया। घर में आसन जमाये बैठे दुष्टों को जब मालूम हुआ कि धीरमति लौट आया तो उनमें खलबली मच गयी। रास्ते में ही धीरमति को मारने के लिए गये दुर्बुद्धि और उसके साथी भी हताश लौट आये।

सबने मिलकर रहस्य-समावेश किया। तब दुर्बुद्धि ने उनसे कहा ''इस बार यह हमसे बच गया। परंतु इसे हम शीघ्र ही ख़तम नहीं करेंगे तो विपत्ति में फँस सकते हैं। प्रजा भी हमारे खिलाफ़ है। वह हमारे षड्यंत्र का विवरण भी उन्हें बता देगी। तब जनता हमें इस देश से भगा देगी। इसलिए यह ज़रूरी है कि धीरमति के नगर-प्रवेश के समय उसे ख़तम कर दें। उसे मार डालने के बाद उसकी जायदाद आपस में बाँट लेंगे। हममें से जिसकी शादी पद्ममुखी से होगी, यह घर उसका होगा। धीरमति को हम ख़तम कर नहीं पायेंगे तो हमारा रूपधर के घर ठहरना असंभव होगा। अपने-अपने घरों में हमें रहना होगा और पद्ममुखी से शादी करने के प्रयत्नों में जुटे रहना होगा। अपना निर्णय सुनावो।''

धीरमति को मार डालने के प्रस्ताव का कुछ लोगों ने खंडन किया। एक ने कहा ''यह जाने बिना कि धीरमति के मरने का समय आ गया या नहीं, हमें इस दिशा में कुछ करना नहीं चाहिये। अगर देवता बता दें कि उसके मरने का समय आ गया तो मैं खुद अपने हाथों से उसे मार डालूँगा। तब तक हम कोई ज़ल्दबाज़ी न करें।''

सबने यह सलाह मानी और घर चले गये। शाम को सुवरों के रखवाले के लौट आने के पहले ही धीरमति अपने पिता के साथ ही रखवाले की झोंपड़ी में सो गया।

- सशेष

बाल-लोक

जीभ की नोक पर दुनिया

अफ्रीका महाद्वीप में कितने देश हैं? टर्कमेनिस्तान की राजधानी क्या है? उज्बेकिस्तान की मुद्रा(धन) का क्या नाम है? हाल ही में हुए मुंबई के प्रेस क्लब में मोनिका मेनोन से पूछे गये कुछ सवालों में से ये हैं। लगभग एक घंटे तक चले प्रश्नोत्तर कार्यक्रम में पूछे गये हर सवाल का सही जवाब उसने क्षण भर में दिया। एक का भी गलत जवाब नहीं दिया। संसार के लगभग १८५ देशों की राजधानियों तथा उनकी मुद्राओं के नाम उसे जबानी याद हैं। आप क्या जानते हैं, इसकी उम्र क्या है? आयु है केवल पांच वर्ष। पहली कक्षा में है। प्रश्नोत्तर के बाद उसकी माँ वनजा मेनोन ने कहा कि पिछले दिसंबर में उसे विश्व के मानचित्र का एक गोला खरीदकर दिया और मोनिका ध्यान से उसे ही देखती रहती है। इस कारण संसार के देशों और उनकी राजधानियों के बारे में संपूर्ण जानकारी रखती है। उसके पिता ने कहा कि मानचित्र के साथ-साथ अपने ही घर में पड़े विश्वकोश भी पढ़ती रहती है। बच्चों की प्रतिभा का पता लगाकर उन्हें प्रोत्साहन दिया जाए तो उनका सर्वतोमुखी विकास हो सकता है और मोनिका इसका ज्वलंत उदाहरण है।

मेधा संपत्ति

'मेन्सा' अत्यधिक बुद्धिशाली सदस्यों की एक अंतर्राष्ट्रीय संस्था है। इस संस्था में इंग्लैण्ड के ही ४०,००० सदस्य हैं। इनमें से सब से छोटी उम्र की पश्चिम इंग्लैण्ड की रियन्नान पेयिन तीन वर्ष की है। उस संस्था में प्रवेश पाने के लिए उसके ज्ञान की जो परीक्षा हुई, उसमें उसने उन्नत स्थान पाया। उससे भी दुगुनी उम्र के बच्चे जो पढ़ पाते हैं, वह इस उम्र में ही अनायास पढ़ लेती है। यह बच्ची अभी-अभी नर्सरी में भर्ती हुई है।

चीनी भाषा में नन्ही बच्ची की प्रतिभा

डांग डांग दक्षिण चीन की तीन साल की नन्ही बच्ची है। चीनी भाषा के ३,००० अक्षर पढ़ जाती है। इनमें से क़रीब छे हज़ार आधार अक्षर हैं। तोड़-मरोडने से तथा दूसरे अक्षरों को जोडने से तरह-तरह के शब्द बनते हैं। अपने बीस महीनों की उम्र में ही उसने २०० पद्यों और नर्सरी गीतों को ज़बानी याद किया। तभी १०,००० शब्दों से अधिक लिख पाती थी। ऐसी प्रतिभाशाली बच्ची ने 'शांघाय गिन्नीस बुक आफ़ वरल्ड रिकार्डस' में स्थान पाया तो इसमें आश्चर्य क्या?

प्रकृति का मित्र

हर्षभात्रा दिल्ली में आठवीं कक्षा में पढ़ता हुआ छात्र है। इसने पर्यावरण के परिरक्षण के लिए 'पंचवटी' नामक एक योजना बनायी। पर्यावरण की परिरक्षा के प्रति बच्चों में उत्सुकता जगाने के लिए हाल ही में संयुक्त राष्ट्र संघ ने बाल-सभा का आयोजन किया। अस्सी देशों से आये हुए बालक-बालिकाओं ने इसमें भाग लिया। हमारे देश का एकमात्र प्रतिनिधि था बारह साल का हर्षभात्रा। उसने उस सभा में भाषण देते हुए अपनी 'पंचवटी' योजना पर प्रकाश डाला। उसने सुझाया कि सब देशों में 'येको क्लब्स' गठित हों, अक्सर सभाएं, चर्चाएं होती रहें। साधारणतया इस उम्र में खेल-कूदों के प्रति अभिरुचि, टी.वी. कार्यक्रमों को देखने की इच्छा व कम्प्यूटरों के प्रति आसक्ति होती है। किन्तु इस उम्र में भी पर्यावरण की परिरक्षा की योजनाओं के बारे में सोचनेवाले हर्षभात्रा का स्वभाव सचमुच ही विलक्षण व प्रशंसनीय है।

अदृश्य शक्तियाँ

धुन का पक्का विक्रमार्क पुनः पेड़ के पास गया। पेड़ से शव को उतारा और अपने कंधों पर डाल लिया। यथावत् मौन श्मशान की ओर बढ़ने लगा। तब शव के अंदर के बेताल ने कहा "राजन्, लगता है कि तुम अमानुष, अदृश्य शक्तियों को पाने की कोशिशों में लगे हो। मेरा संदेह है कि इन्हीं को पाने के प्रयत्न में इस घनघोर अंधकार में नाना प्रकार की यातनाएँ सह रहे हो। इस भयंकर श्मशान में इतना परिश्रम कर रहे हो, यही इसका कारण होगा। कुछ अभूतपूर्व व्यक्तियों, कुछ अद्‌भुत घटनाओं तथा कुछ अपूर्व उदाहरण देखकर कुछ लोगों को लगता होगा कि ये शक्तियाँ अयाचित ही प्राप्त हो सकती हैं। इन अदृश्य शक्तियों की सहायता पाने के लोभ में वे अपने आप फंस जाते हैं। मैं नहीं चाहता कि तुम भी ऐसे लोभ में फंस

बैताल कथा

जाओ और अपना मूल्यवान समय व्यर्थ करो। इस व्यर्थ प्रयत्न से बचने के लिए तुम्हें मैं हिमकर नामक एक राजकुमार की कहानी सुनाऊंगा। अपनी थकावट दूर करते हुए उसकी कहानी श्रद्धा से सुनो।'' वह आगे हिमकर की कहानी यों सुनाने लगा।

गोदावरी नदी के तट पर सोमपुर नामक एक छोटा-सा राज्य था। हिमकर उसका युवराज था। वह, सेनाधिपति का पुत्र भद्रवर्मा व मंत्री की पुत्री मधुमती तीनों बाल्यकाल से ही मित्र थे। हिमकर व भद्रवर्मा ने दस सालों तक गुरुकुल में शिक्षा पायी। विद्याभ्यास के उपरांत जब वे अपना राज्य लौटने लगे तब गुरुकुल के प्रधानाचार्य ने भद्रवर्मा की जानकारी के बिना, हिमकर को परकाय प्रवेश की विद्या सिखायी। आचार्यों के आशीर्वाद पाकर दोनों राजधानी पहुँचे।

राज्य प्रासाद के प्रधान द्वार के सम्मुख खुला मैदान था। हर दिन शाम को सायंकाल के समय युवक वहाँ तरह-तरह की स्पर्धाओं में भाग लेते थे। एक बार दौड़ की प्रतियोगिता में हिमकर हार गया। जीतनेवाला एक दंडनायक का पुत्र था। युवराज को जीतने के कारण वह गर्वित होकर हिमकर की हँसी उड़ाने लगा। हिमकर ने उससे कोई बात तो न की पर, उसी दिन रात को किसी विषैले कीड़े के काटने से महीने भर वह पलंग पर ही पड़ा रहा।

एक और बार जब हिमकर और मधुमती उद्यानवन में टहल रहे थे, तब आस्थान वैद्य का बेटा वहाँ आया। अकारण ही उसने हिमकर से झगड़ा मोल लिया और गुस्से में आकर उसपर पथ्थर फेंका। हिमकर को कोई बड़ी चोट तो नहीं लगी परंतु उस दिन औषधिपूर्ण पौधों को सींचते समय उस वैद्य के बेटे को साँप ने डस लिया। किन्तु अपने पिता की चिकित्सा से वह बच गया। यह बात हिमकर को मालूम हुई।

मधुमती असाधारण सुंदरी थी। हिमकर और भद्रवर्मा दोनों उसे चाहते थे। दोनों का विश्वास था कि मधुमती उसे ही चाहती है।

एक दिन प्रातःकाल तीनों राजा के फलों के बगीचे में टहलने गये। यह आम के फलने का मौसम नहीं था। किन्तु

आश्चर्य यह कि एक पेड़ की डाली में एक पका आम लटक रहा था। मधुमती उसे खाने के लिए लालायित हो गयी। उसने उन दोनों से विनती की कि वे फल तोड़कर लायें।

भद्रवर्मा तक्षण ही बड़ी तेज़ी से पेड़ पर चढ़ने लगा। हिमकर भी चाहता था कि वह फल मधुमती को पहले मैं ही दूँ। वह भी पेड़ पर चढ़ने लगा। अचानक उसकी दृष्टि थोड़ी दूरी पर मरे पड़े तोते पर पड़ी। उसने अपनी सीखी परकाय प्रवेश की विद्या का उपयोग किया और तोते के शरीर में प्रवेश किया। फटाक् से वह पेड़ पर जा उड़ा और फल को तोड़कर नीचे आ गया। फिर से अपने शरीर में प्रवेश करके हिमकर ने वह फल मधुमती को दिया। यह सब कुछ हुआ, पल भर में।

भद्रवर्मा ने यह देख लिया। बहुत ही क्रोधित होते हुए उसने कहा "राजकुमार, यह सरासर अन्याय है। पेड़ चढ़ने में अपनी फुर्ती दिखा नहीं पाये, उल्टे मंत्र-तंत्रों का आश्रय लिया। तुम्हें अपनी करनी पर शरम नहीं आती? कुयुक्तियाँ वीरों के लक्षण नहीं हैं। भीरुओं के लक्षण हैं।" चिल्लाता हुआ नीचे कूदा तो उसका पैर टूट गया।

भद्रवर्मा के पैर की एक हड्डी टूट गयी। तीन महीनों तक वह चल-फिर नहीं पाया। इस घटना के बाद, हिमकर के मन की अस्थिरता को एक स्थिर रूप मिला। इतने समय तक उसकी कल्पनाओं के बारे में वह किसी निर्णय पर नहीं आ पाया। आज

उसने निर्णय किया कि कोई अदृश्य शक्ति उसकी सहायता कर रही है। अब उसे लगा कि वह शक्ति उन-उनको सज़ा दे रही है, जिन-जिन्होंने उसका अपमान किया। इसे दृढ़ करने के लिए उसे अनेकों दृष्टांत मिले। वह नहीं चाहता कि आधार हीन मानकर इनका तिरस्कार किया जाए। हिमकर में यह विश्वास दृढ़ हो गया कि जो-जो उसका अहित चाहते हैं, वे कष्टों में फँसकर ही रहेंगे।

राजा का बेटा हिमकर मंत्री की पुत्री मधुमती के साथ अक़्सर घूमता-फिरता देखा गया। राजा ने भी खुद देखा तो उसे लगा कि हिमकर, मधुमती से प्रेम कर रहा है। एक दिन उसने अपने बेटे को बुलाकर कहा "तुम्हारा राज्याभिषेक करना चाहता हूँ।

भद्रवर्मा यह जानकर खुश होगा । उसे मालूम नहीं था कि भद्रवर्मा भी मधुमती को चाहता है । अगर वह यह जानता तो इस विवाह की बात ही न उठाता ।

भद्रवर्मा क्रोधी स्वभाव का था । निर्भयी भी । उसने आवेश में आकर कह भी दिया "हिमकर राजकुमार है, होनेवाला राजा है, ऊँचे ओहदे का है, अपने अधिकार के बल पर कुछ भी कर सकता है । जानते हुए भी कि मैं मधुमती से प्रेम कर रहा हूँ, विवाह रचाने तैयार हो गया । इससे बढ़कर मित्र-द्रोह और क्या हो सकता है?" आख़िर उसने हिमकर से कहा "तुम्हारा पिता राजा है । चूँकि मधुमती का बाप उनका मंत्री है, इसलिए तुम अपनी इच्छा पूरी करने जा रहे हो । अपनी जिद को कामयाब बनाने जा रहे हो । मैंने सोचा तक नहीं कि तुम इतने नीच हो । तुममें क्षात्र-धर्म थोड़ा-सा भी रह गया हो तो मुझसे द्वंद्व युद्ध करो । मधुमती को जीतो ।" यों उसने हिमकर को ललकारा ।

सोचता हूँ कि साथ ही साथ तुम्हारा विवाह भी हो जाए तो अच्छा होगा । क्या महामंत्री से इस विषय में बात करूँ?"

उत्तर में हिमकर ने केवल मुस्कुरा दिया । इस बात पर वह खुश हुआ कि उसके पिता ने स्वयं ही उसके मन की इच्छा जान ली और किसी महाराज की पुत्री से विवाह करने का प्रस्ताव नहीं रखा ।

यह शुभ समाचार सुनाने हिमकर ने, मधुमती को ख़बर भेजी कि वह शाम को नदी-विहार करने आये । किन्तु शाम को भद्रवर्मा भी मधुमती के साथ नदी-तट पर आया । तीनों एक नौका में बैठे और पास ही के एक छोटे-से द्वीप में आये । लौटते समय हिमकर ने उन दोनों को अपने पिता का निर्णय सुनाया । उसने सोचा कि मित्र

मधुमती यह सब कुछ देखती रही पर चुप रह गयी, मानों इस घटना से उसका कोई संबंध ही नहीं ।

हिमकर ने अपने आवेश को काबू में रखा और भद्रवर्मा को शांत करने की कोशिश की । भद्रवर्मा क्रोध से काँपने लगा और म्यान से तलवार निकाली । हिमकर को उसकी रक्षा करनेवाली शक्ति की याद आयी और उसने भद्रवर्मा के दायें हाथ की कलई को ज़ोर से पकड़ लिया और उसे रोकता रहा । फिर भी भद्रवर्मा आवेश में

आकर उसपर वार करने ही वाला था, नाव उलट गयी।

मधुमती मुडकर देखे बिना तैरती हुई नदी तट पर आ पहुँची। हिमकर और भद्रवर्मा भी पानी में ही थे। हिमकर ने सोचा कि भद्रवर्मा किनारे आ नहीं पायेगा और उसे लगा कि भद्रवर्मा के तलवार निकालने के कारण ही यह दुर्घटना हुई। इतने में उलटी नाव के अगले हिस्से के भाग से उसका सर टकरा गया और वह बेहोश हो गया।

हिमकर ने जब आँखें खोलीं तब उसने देखा कि भद्रवर्मा उसके पेट को दबा रहा है और उसके मुँह से पानी को उगलवा रहा है। मधुमती बगल में ही बेचैन खड़ी है। हिमकर जैसे ही उठकर बैठ गया, भद्रवर्मा ने एक बार उसकी ओर तीखी नज़रों से देखा और वहाँ से उठकर बिना बोले चला गया।

तब मधुमती ने हिमकर से कहा "तुम बड़े तैराक हो, पर चोट लगने से बेहोश हो गये थे। क्या जानते हो, ऐसा क्यों हुआ? इसके पहले ही भद्रवर्मा ने मुझसे एक रहस्य बता दिया था। उसने कहा कि एक अदृश्य शक्ति सदा उसके साथ रहती है। ज़रूरत पड़ने पर वह शत्रुओं को इस प्रकार दुर्घटना का शिकार बना देती है और कभी-कभी उन्हें मार भी डालती है।" हिमकर कुछ बताना ही चाहता था, पर रुके और सुने बिना वह वहाँ से तेज़ी से चली गयी। थोडी देर बाद हिमकर जैसे ही राजभवन में पहुँचा, अपने पिता से उसने कहा, "मैं इतनी जल्दी शादी करना नहीं चाहता। कुछ समय तक देश में भ्रमण करना चाहता हूँ।" पिता की अनुमति पाकर वह उसी

क्षण निकल भी पड़ा।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर विक्रमार्क से पूछा "राजन्, हिमकर के इस विचित्र व्यवहार का क्या उद्देश्य है? मधुमती से विवाह रचाने के लिए पिता को अपनी स्वीकृति भी दी, फिर भी वह क्यों देश में भ्रमण करने के लिए उसी क्षण निकल पड़ा? क्या वह भद्रवर्मा से डरने लगा? जिस मधुमती से भद्रवर्मा शादी करना चाहता था, उस मधुमती से शादी करने पर सदा भद्रवर्मा के साथ रहनेवाली अदृश्य शक्ति के वार का उसे भय हो गया? नहीं तो, कृतज्ञता, भाव से उसने शादी का मुहूर्त टाल दिया कि उसकी रक्षा भद्रवर्मा ने की? क्या उसने अपना प्रेम कृतज्ञता-भाव से प्रेरित होकर ही त्याग दिया? जानते हुए भी मेरे इन संदेहों की निवृत्ति नहीं करोगे तो तुम्हारा सिर टुकड़ों में फट जायेगा।"

उत्तर में विक्रमार्क ने कहा "हिमकर ने मधुमती से विवाह करना नहीं चाहा, इसके ये कारण बिल्कुल नहीं हैं। उसने पहले अदृश्य शक्ति का विश्वास किया। उसने सोचा कि उसकी अदृश्य शक्ति के बल पर भद्रवर्मा पानी में डूब जायेगा। परंतु जब उसके बदले स्वयं पानी में डूब गया तब अदृश्य शक्ति से उसका विश्वास उठ गया। अपनी ही अदृश्य शक्ति से जिसका विश्वास उठ गया हो, भला वह दूसरे की अदृश्य शक्ति का विश्वास कैसे और क्योंकर करेगा? इसलिए भद्रवर्मा से वह कदापि भयभीत नहीं हुआ। हिमकर ने सोचा था कि मधुमती उससे प्रेम करती है। किन्तु नाव जैसे ही उलटी, उसकी ओर भी देखे बिना वह तैरती हुई किनारे पर आ गयी और अपने प्राणों की रक्षा कर ली। अब उसकी समझ में आ गया कि वह उसे चाहती ही नहीं। ऐसी स्थिति में यह कहना भी असंगत है कि पानी में डूबते हुए उसे बचाने के कारण कृतज्ञता-भाव से प्रेरित होकर अपने प्रेम को उसने भद्रवर्मा के लिए त्याग दिया।"

राजा का मौन-भंग करने में सफल बेताल शव सहित ग़ायब हो गया और फिर से पेड़ पर जा बैठा।

(आधार : शारदा रमेश पंत की रचना)

हठ किंतु साच

सीतापुर के सीताराम का विश्वास है कि बादोपवाद में वह किसी को भी हरा सकता है । पर गाँव के लोगों का कथन है कि उसी गाँव का निवासी राजाराम हठी है और वह किसी को भी हराने की शक्ति रखता है ।

सीताराम और राजाराम एक दिन खेत में मिले । किसी न किसी प्रकार उससे वाद करने के लिए उतावले सीताराम ने कहा ''हर दिन तुम्हारी बकरियाँ मेरे खेत में आती हैं और चरती हैं । इसके लिए तुम्हें हरज़ाना भरना होगा । अगर तुमने ऐसा नहीं किया तो ग्रामाधिकारी से फ़रियाद करूंगा ।''

''पशु तो घास चरते हैं या पत्ते खाते हैं । तुम्हारे खेत में ये दोनों नहीं हैं । इसलिए तुम्हारी शिकायत की कोई बुनियाद ही नहीं है ।'' राजाराम ने कहा ।

सीताराम ने कहा ''उधर देखो, पशु घास चर रहे हैं ।''

राजाराम ने मुडकर देखा कि कुछ गायें घास चर रही हैं ।

''पशुओं से मेरा मतलब बकरियों से है । हम तो बात कर रहे थे, बकरियों के बारे में ही । वहाँ तो गायें घास चर रही हैं'' राजाराम ने बताया ।

हठपूर्वक सीताराम ने कहा ''मेरे साथ आओ । तुम्हें बकरियाँ दिखाऊंगा'' दोनों थोडी दूरी तक गये । गायों के पीछे उन्हें एक बकरी दिखायी पड़ी । सीताराम ने तुरंत कहा ''देखा, यहाँ एक बकरी है । वह चरने के लिए ही आयी है ।''

''क्या पता? किसलिए वह यहाँ आयी । जब तक अपनी इन आँखों से स्वयं नहीं देखता, तब तक मैं किसी बात का वि[illegible] नहीं करता'' राजाराम ने कहा ।

मगन

"ठीक है, तुम खुद देखने जा रहे हो।" कहते हुए उसने बकरी को पास ही के बैंगन व ककडी के पौधों के पास भगाया। बकरी ने तुरंत सिर झुकाया और पौधों के पत्तों को चरने लगी। सीताराम ने गर्व से पूछा "कहो, अब क्या कहते हो?" "मैंने तो अपनी बकरियों के बारे में कहा था। यह तो मेरी बकरी नहीं है।" सीताराम ने कहा।

इतने में राजाराम का नौकर बकरियों के साथ उधर से गुज़र रहा था। सीताराम ने तुरंत कहा "अब बताओ, जो बकरियों जा रही हैं, तुम्हारी हैं या नहीं।"

राजाराम ने गंभीर स्वर में कहा "हाँ, मेरी ही हैं।" सीताराम ने नौकर को बुलाकर उससे पूछा "अरे, ज़रा बताना कि ये बकरियाँ बैंगन, ककड़ी व तुरई के पौधों को खायेंगी या नहीं?" नौकर ने कहा "क्यों नहीं खायेंगीं? बाबूजी, क्या आप नहीं जानते? बकरियाँ कपास के पत्तों के अलावा सब पत्ते खाती हैं।"

"तो एक बार चरवाकर दिखाना। तेरे यजमान खुद देखेंगे" सीताराम ने नौकर से कहा। अपना नुक़सान हो, इसकी भी सीताराम को परवाह नहीं। वह गाँववालों को दिखाना चाहता है कि बाद में मैंने राजाराम को हराया।

नौकर ने तरकारियों के पौधों की तरफ़ बकरियों को भगाया। वे बड़े ही आनंद से पूँछ हिलाती हुई चरने लगीं। तब सीताराम को लगा कि उसने जीत लिया। बड़े ही उत्साह से तालियाँ बजाते हुए वह कहने लगा "देखा राजाराम, अपनी ही आँखों से खुद देख लो। इससे बढ़कर सबूत और क्या चाहिये? तुम्हारी बकरियाँ मेरे खेत में चर रही हैं। अब बोलो, तुम्हें क्या कहना है?"

"मैं उस तरफ़ नहीं देखूँगा" राजाराम ने कहा। "तो मान लेते हो कि मेरा आरोप सही है?" सीताराम ने पूछा।

"कैसे मानूँगा? मैंने पहले ही बता दिया था कि जब तक अपनी इन आँखों से खुद नहीं देखता तब तक मानने का सवाल ही नहीं उठता" राजाराम ने कहा।

उसके उत्तर से सीताराम भली भांति जान गया कि राजाराम हठी नहीं है। उसकी अक़्ल असली व सच्ची है। सच्चाई जानकर सीताराम ने अपनी हार मान ली।

समुद्रतट की सैर – ९

शब्द : मीरा नायर ◆ चित्र : गौतम सेन

मल्पे या उद्यावर नदी जहां अरब सागर में गिरती है, वहां पर नारियल के कुंजों से घिरा मल्पे बंदरगाह है. मल्पे दक्षिण कन्नड जिले का हिस्सा है और देश में मछली-संसाधन का सबसे बड़ा केंद्र है.

बड़ा सुंदर नजारा है यहां का. बंदरगाह के पश्चिम में तीन चट्टानी टापू हैं. उनमें से एक का नाम कोकोनट द्वीप है और उस पर लावा से निर्मित प्राकृतिक स्तंभ हैं. इस टापू को राष्ट्रीय भूवैज्ञानिक स्मारक घोषित किया गया है. ये स्तंभाकार चट्टानें आज से कोई ६ करोड़ साल पहले ज्वालामुखी क्रिया से बनी थीं.

मल्पे से चार कि.मी. दक्षिण में है प्रसिद्ध तीर्थस्थान उडुपि, जिसका पुराना नाम रजताद्रिपुर बताया जाता है. आज से ७०० साल पहले महान वैष्णव संत और दार्शनिक श्रीमध्वाचार्य ने यहां आठ मठों की स्थापना की थी. इन्हें 'पर्यायमठ' कहते हैं. मंदिर श्रीकृष्ण का है और भगवान की मूर्ति यहां मुख्यद्वार की ओर नहीं, बल्कि एक खिड़की की ओर मुंह करके खड़ी है. एक कहानी इसके साथ जुड़ी है.

सोलहवीं सदी के कन्नड संत-कवि कनकदास यहां देव-दर्शन करने आये. वे सेनापति थे, परंतु जाति से गड़रिये थे. पुजारियों ने उन्हें मंदिर के भीतर नहीं जाने दिया. यही नहीं, उन्हें मुख्यद्वार पर खड़े हो कर दर्शन करने की छूट भी नहीं दी. इस पर भगवान की मूर्ति ने अपना मुंह एक झरोखे की ओर फेर लिया, ताकि कनकदास देव-दर्शन कर सकें. वह झरोखा आज भी मौजूद है और 'कनकन किंडी' (कनक का झरोखा) कहलाता है.

श्रीमध्वाचार्य की प्रतिमा

कोकोनट आइलैंड पर लावा के शिलास्तंभ

उडुपि का श्रीकृष्ण मंदिर

सारे साल उडुपि में भक्तों का तांता लगा रहता है. पर दो साल में एक बार होनेवाले पर्यायोत्सव पर श्रद्धालुओं की भीड़ उमड़ पड़ती है, जब मंदिर का प्रबंध एक मठ दूसरे मठ को सौंपता है.

उडुपि शिक्षा और बैंकिंग कारोबार का भी केंद्र है.

उडुपि से चार कि.मी. दक्षिण-पश्चिम में है श्रीमध्वाचार्य का जन्मस्थान उद्यावर. यहां उनकी प्रतिमा भी है.

उडुपि के दक्षिण-पूर्व में तट से जरा हट कर, जैनों के दो बड़े धार्मिक स्थल हैं – कार्कल और मूडबिद्री. कार्कल में १२.८ मीटर ऊंची गोम्मटेश्वर यानी भगवान बाहुबली की मूर्ति है, जिसकी स्थापना १४३२ ई. में हुई थी. मशहूर शिल्पी स्व. रंजाल गोपाल शेणै यहीं के निवासी थे. श्री शेणै की तराशी हुई पत्थर की विशाल प्रतिमाएं देश के अनेक हिस्सों में स्थापित हैं. एक तो सुदूर जापान में भी है.

मूडबिद्री की हजार खंभेवाली बसदी (जैन मंदिर)

मूडबिद्री को 'जैनों की काशी' कहा जाता है. यहां १८ बसदियां (जैन मंदिर) हैं. उनमें सबसे प्रसिद्ध है त्रिभुवनतिलक चूडामणि बसदी, जिसे हजार खंभेवाली बसदी भी कहा जाता है. अखंड शिला से बने खंभे और तीर्थंकरों की रत्न-जड़ी प्रतिमाएं इस मंदिर का मुख्य आकर्षण हैं.

सोलहवीं सदी के जैन कन्नड-कवि रत्नाकर वर्णी ने अपना महाकाव्य 'भरतेश-वैभव' मूडबिद्री में ही रचा था, ऐसी मान्यता है.

मूडबिद्री के दक्षिण-पश्चिम में है मंगलूर. माना जाता है कि दसवीं सदी की मंगलादेवी नाम की रानी के नाम पर से इस शहर का यह नाम रखा गया. वैसे दूसरी सदी ई. से ही यहां का बंदरगाह खूब व्यस्त और समृद्ध रहा है. टीपू सुल्तान ने यहां रेशम का उद्योग आरंभ करवाया और मंगलूर रेशम के लिए मशहूर हो गया.

गोम्मटेश्वर की प्रतिमा, कार्कल

मंगलूर शहर नेत्रावती और गुरुपुर नामक नदियों के संगम पर बसा हुआ है.
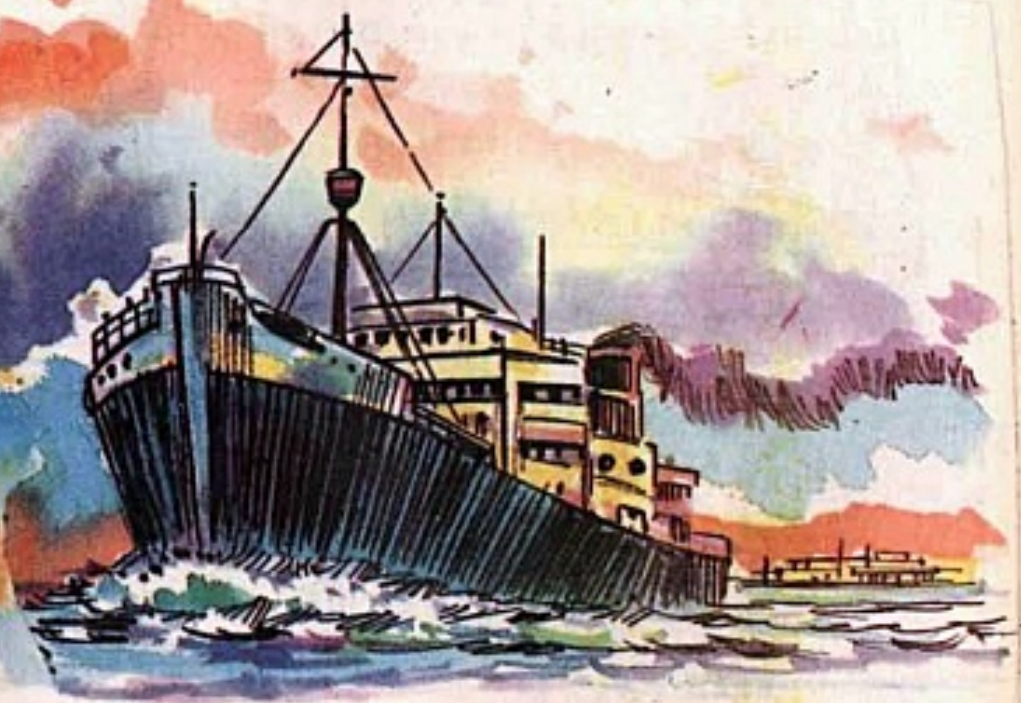
मंगलूर कर्नाटक में उच्च शिक्षा का महत्वपूर्ण केंद्र है. व्यापार और उद्योग का बड़ा केंद्र होने के अलावा वह कर्नाटक का एकमात्र बड़ा बंदरगाह है.

७६० कि.मी. लंबी कोंकण रेल्वे, जो कि समुद्रतट के साथ-साथ बिछायी जा रही है, मंगलूर को मुंबई से जोड़ेगी. उसके पूरा हो जाने पर मुंबई से सिर्फ १८ घंटे में ट्रेन से मंगलूर पहुंचा जा सकेगा. अभी तो पूरे ४१ घंटे लगते हैं.

मंगलूर से ८ कि.मी. दक्षिण में उल्लाल है, जहां कर्नाटक की तटपट्टी समाप्त होती है. यह छोटा-सा शहर अपने सुंदर बालू-तटों के लिए प्रसिद्ध है. १७ वीं सदी के उत्तरार्ध में उल्लाल पर अब्बक्का नाम की बहादुर रानी का शासन था. गद्दी पर बैठते ही उसने पुर्तगालियों को कर देना बंद कर दिया.

उन दिनों अरब सागर में पुर्तगालियों का बड़ा दबदबा था. वे कर वसूल किये बिना दूसरों के जहाजों को समुद्र में आने-जाने नहीं देते थे. पर रानी अब्बक्का ने उनकी धौंस न मान कर अपने जहाज व्यापार करने अरब देशों को रवाना किये. पुर्तगालियों ने उल्लाल पर हमला कर दिया. लेकिन रानी और उसके वीर सैनिकों ने पुर्तगालियों को मार भगाया.

वीर रानी अब्बक्का ने पुर्तगालियों को मुंह की खिलायी.
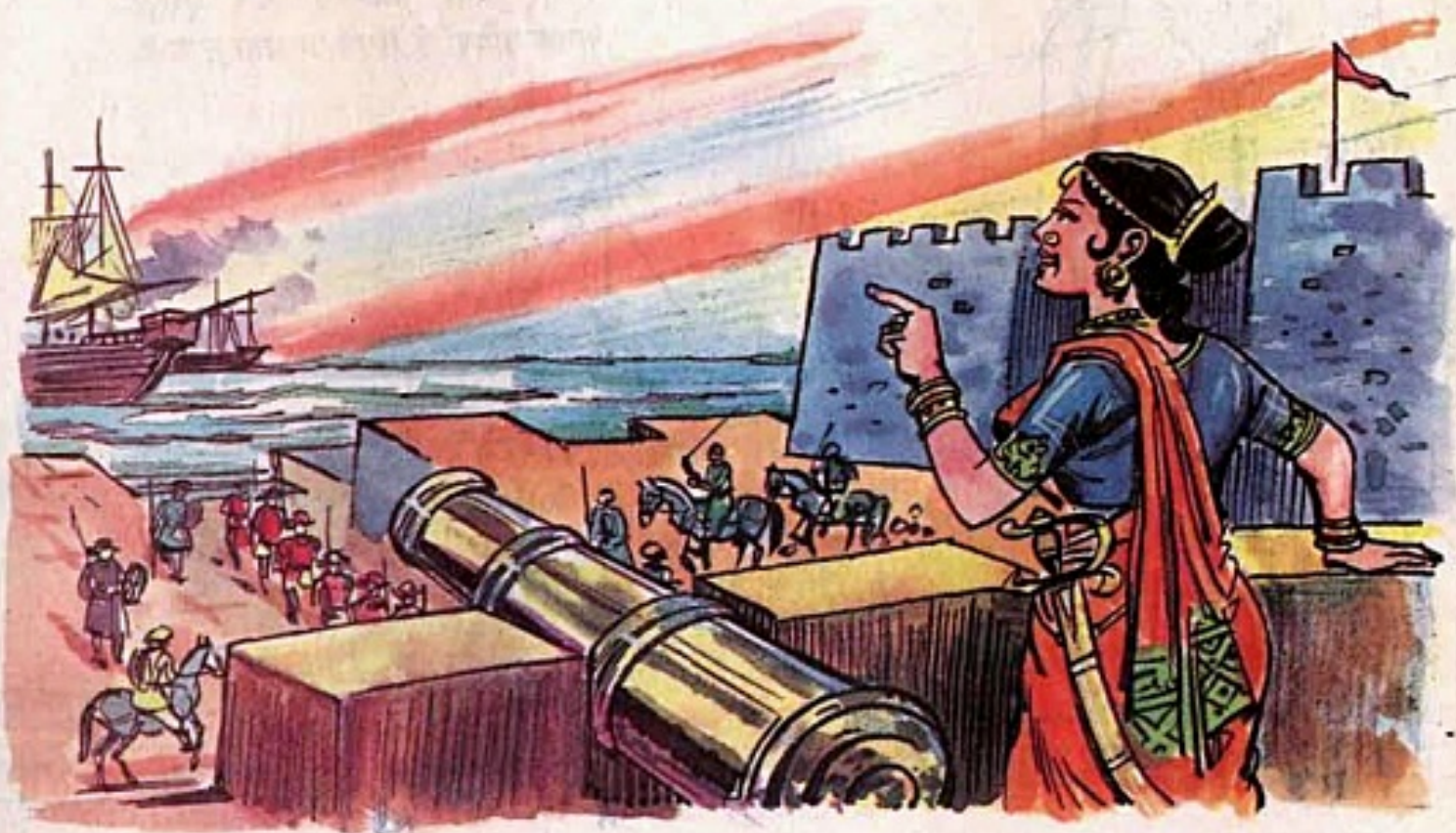
अन्नदान की महिमा

सूरदास बहुत बड़ा दानी था। गंगा नदी के प्रदेशों की भूमि बड़ी ही उपजाऊ होती थी। दूर-दूर प्रांतों से कुली आते थे और खेतों में काम करते थे। उनके इन्हीं प्रदेशों में आने का मुख्य कारण था - सूरदास का अन्नदान। भूखे-प्यासे इन ग़रीब कुलियों को सूरदास मुफ़्त ही खाना खिलाता था।

वह कुलियों से कहता "शरमाना मत। आराम से खाना। जो भी मेहनत करता है, बालिश्त भर के पेट के लिए ही तो करता है। आपको खाना खिलाने से मेरा कोई नष्ट नहीं होगा।"

कोई भी राहगीर हो या तीर्थ-यात्री, आधी रात में भी दरवाज़ा खटखटाये तो बडे प्यार से सूरदास उसका आदर करता और उसे खाना खिलाता।

एक दिन नीलकंठ नामक एक धनी बैलगाड़ी में सूर्यास्त के बाद उस गाँव में आया। वह उधर से गुज़र रहा था। जहाँ उसे जाना था, वह जगह यहाँ से चार कोस की दूरी पर थी। इसलिए उसने उस रात को वहीं ठहर जाने का निश्चय किया।

धनी ने अपने गाड़ीवाले से कहा कि जाओ और पता लगावो कि भोजन कहाँ मिलेगा? तब उसने कहा "साहब, जहाँ सूरदास जैसे दाता हैं, वहाँ भोजन की क्या कमी? किसी और जगह पर भोजन मिलने की कोई गुंजाइश नहीं। जाना हो तो हमें सूरदास के घर ही जाना होगा।"

नीलकंठ को लाचार होकर सूरदास के घर जाना पड़ा। उस समय दरवाज़ा बंद था। इसलिए वह चबूतरे पर पड़ी कुर्सी में बैठ गया।

थोड़ी देर बाद सूरदास दरवाज़ा खोलकर बाहर आया तो नीलकंठ ने उससे कहा "मुझे और मेरे गाड़ीवाले को दो भोजन चाहिये।

नाग शिरीष
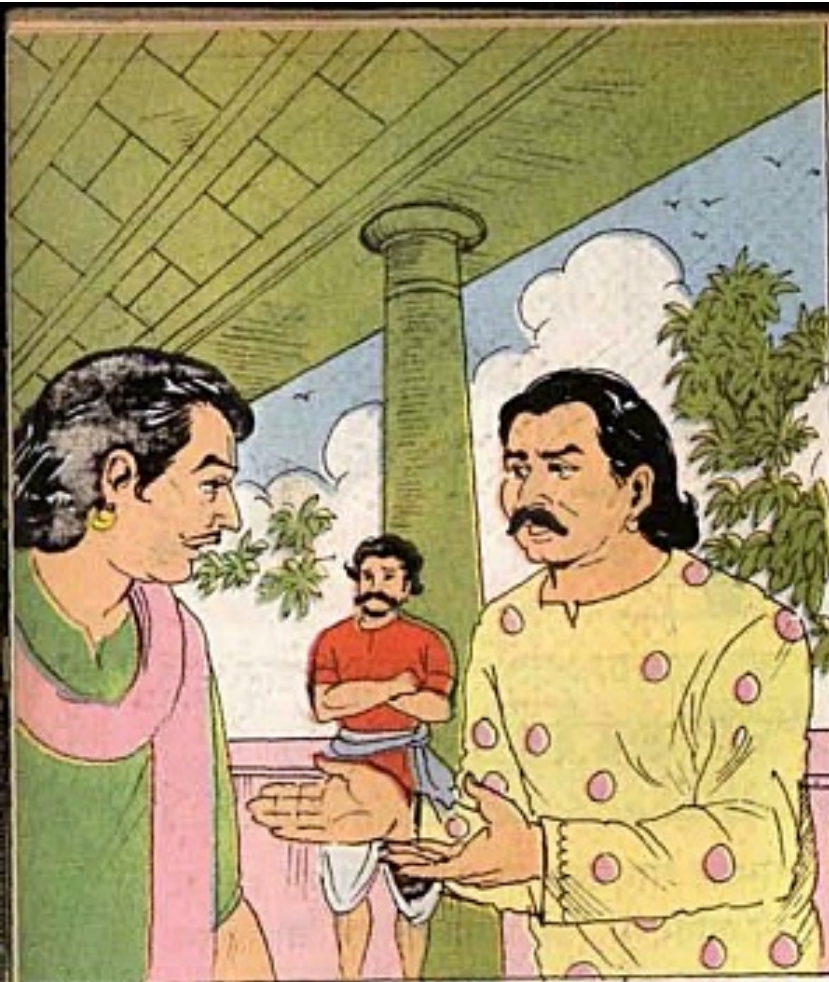
पैसों की चिंता मत करो। स्वादिष्ट पकवान बनवाना। दो तरह के अचार भी चाहिये। मेरा नाम नीलकंठ है, विष्णुपुर का हूँ, ज़मींदार का निकट रिश्तेदार हूँ। भोजन मेरे ओहदे के माकूल होना चाहिये।''

सूरदास यद्यपि उस धनी की बातों से चिढ़ गया, पर हँसते हुए उसने कहा ''मेरी दृष्टि में मेरे घर आया अतिथि विष्णु भगवान के समान है।

धनिक हो या दरिद्र, साथ-साथ बैठकर परब्रह्म स्वरूप अन्न को ग्रहण करते हुए देखकर मुझे अपार हर्ष होता है। यह दृश्य देखते हुए मुझे लगता है कि मेरा जीवन धन्य हो गया। मेरे दादा-परदादा ने बहुत बड़ी संपत्ति मेरे लिए छोड़ रखी है। जो सबको खिलाता है, वही आपको भी खिला पाऊँगा। भूख, आपकी और गाड़ीवाले की समान है। जब कि भूख का अपना कोई ओहदा नहीं, तब मनुष्य होकर ऐसे ओहदों की कल्पना करते हुए आपको देखकर मुझे आश्चर्य हो रहा है। मेरा गृह अन्न नहीं बेचता। ओहदे को भुलाकर सहपंक्ति में बिठाकर नित्य अन्नदान करता है। पैर धोइये और भोजन करने पधारिये।''

सूरदास की धर्मबुद्धि तथा दानगुण को देखकर नीलकंठ अपने अहंकार-भरे व्यवहार पर लज्जित होते हुए बोला ''आप जैसे दानी के सामने मैं कुछ भी नहीं हूँ। मुझे क्षमा कीजिये।'' फिर उसने पेट भर खाया और साथ ही बैठे गाड़ीवाले से कहा ''थोड़ी देर के लिए भुला दो कि मैं धनी हूँ, तुम्हारा मालिक हूँ।'' कहते हुए वह तब तक उसके साथ ही बैठा रहा जब तक गाड़ीवाले का खाना ख़तम नहीं हुआ।

दूसरे दिन सबेरे नीलकंठ ने सूरदास को अपनी कृतज्ञता बतायी और निकल पड़ा।

गाड़ी गाँव के बाहर आ पहुँची। अब वह नदी के बाँध पर से गुज़र रही थी। गाड़ीवाले के मस्तिष्क में दुर्बुद्धि जगी। उसने गाड़ी रोक दी और नीलकंठ को गाड़ी से उतरने को कहा। नीलकंठ सोचने लगा कि यह क्यों मुझे गाड़ी से उतरने के लिए कह रहा है। उतरते ही गाड़ीवाले ने गुर्राते हुए उससे कहा ''मैं किसी का नौकर बने रहना नहीं चाहता। जान गया कि आसानी से धनी कैसे बन सकता हूँ। चुपचाप जितना धन-तुम्हारे पास है, निकाल।''

नीलकंठ डरता हुआ बोला ''लूटा धन

चंचल होता है। अगर तुम समझते हो कि इस धन से धनवान बन जाऊँगा तो यह तेरा भ्रम है। घर लौटने के बाद नीति के मार्ग पर चलकर धन कमाने के लिए जितना धन चाहिये, मैं तुम्हें दूँगा।'' किन्तु दुराशा नामक पिशाच के वशीभूत गाड़ीवाले ने उसका यह प्रस्ताव स्वीकार नहीं किया। उसने ज़बरदस्ती नीलकंठ से धन ले लिया और उसे बहती नदी में ढकेल दिया। फिर वहाँ से भाग गया।

कुछ दिनों के बाद वह रामनगर के ज़मींदार के शहर में पहुँचा। वहाँ उसने नीलकंठ से लूटे धन से छोटा-सा व्यापार शुरु किया। थोड़े ही समय में वह धनवान बन गया और नगर के प्रमुखों में से एक माना जाने लगा।

परंतु धीरे-धीरे गाड़ीवाले में पाप-भीति प्रारंभ हुई। इसलिए हर दिन दो ग़रीबों को मुफ़्त खाना खिलाने लगा। वह अपने आप कहता रहता था कि यह पुण्य मेरी रक्षा करती रहो।

नदी में गिरा नीलकंठ मरकर पिशाच बन गया। प्रतीकार की भावना उस पिशाच में घर कर गयी। पिशाच रामनगर पहुँचा। उसने वहाँ देखा कि गाड़ीवाला बड़े वैभव के साथ जीवन बिता रहा है। उसे देखकर वह क्रोध से जल उठा। उस समय गाड़ीवाला कीमती कपड़े पहनकर ज़मींदार के आस्थान में उच्च आसन पर आसीन था। उस समय आस्थान में पिशाचों के बारे में ही चर्चा चल रही थी। लोग पिशाचों के होने या न होने पर अपने-अपने अभिप्राय व्यक्त कर रहे थे।

पिशाच बने नीलकंठ ने सोचा, यही अच्छा मौक़ा है। वह देखते-देखते गाड़ीवाले में समा गया। बस, इससे गाड़ीवाले में आकाश-पाताल का अंतर आ गया। वह उठ खड़ा हुआ और कहने लगा ''देखो, पिशाच आ गया। तुमसे हो सके तो मुझसे इसकी रक्षा करो।'' वह चीखता रहा, चिल्लाता रहा और छलांगे मारता रहा।

पहले लोगों को यह बिनोद अच्छा लगा। किन्तु थोड़ी ही देर में वे सब डरने लगे। जब इसका दृढ़ीकरण हो गया कि वह पिशाच की पकड़ में है तो ज़मींदार के साथ-साथ सब थर-थर काँपने लगे। आस्थान के भूत वैद्य को ख़बर भेजी गयी। उसने आकर मंत्र पढ़े और नीलकंठ पिशाच से वार्तालाप किया।

उन्हें अब मालूम हो गया कि गाड़ीवाले ने नीलकंठ पर कितना अत्याचार किया।

भूतवैद्य ने पिशाच से कहा "ऐ पिशाच, जो हुआ, सो हो गया। इस गाड़ीवाले को हम कड़ी सज़ा देंगे। इसे छोड़कर चला जा।" इसपर पिशाच ठठाकर हँसता हुआ बोला "इस दुष्ट का शरीर मुझे नहीं चाहिये। इस पिशाच रूप से मुक्त होना हो तो एक ही मार्ग है। सूरदास यहाँ आयें और इस नीच को खिलाये अन्न का फल मुझे दे दें।"

सूरदास वहाँ लाया गया। उसे देखते ही गाड़ीवाले के अंदर के पिशाच ने उसे विनयपूर्वक नमस्कार किया और कहा "महोदय, आपको अब साबित करना होगा कि अपात्र को अन्न खिलाना भी उत्तम दान ही माना जायेगा। इस गाड़ीवाले को अन्नदान करने से जो फल आपको मिला, वह मुझे दीजिये और मुझे इस पिशाच-रूप से मुक्त कीजिये।"

सूरदास ने कहा "मुझे अन्नदान की महिमा के बारे में कुछ नहीं मालूम। धनिक हो या दरिद्र, चोर हो या भिखारी, उसकी भूख को मिटाना ही मेरा उद्देश्य मात्र है। फल की प्रतीक्षा में मैंने अन्नदान कभी नहीं किया। किन्तु सचमुच अन्नदान में महिमा हो तो तुमको इस पिशाच रूप से मुक्ति मिलेगी।" पिशाच ने विनयपूर्वक कहा "धर्मात्मा, भूख बड़ी बुरी होती है। विवेक से दूर कर देती है। अपने अन्नदान का पुण्य मुझ जैसे पिशाच को दान में देकर मेरी रक्षा की। आपके अन्नदान की महिमा संसार को बताने के लिए ही मैंने इस मनुष्य पिशाच में प्रवेश किया। मेरा काम हो गया। अब मैं जा रहा हूँ।"

पिशाच के चले जाते ही गाड़ीवाला बेहोश होकर गिर पड़ा। थोड़ी देर बाद होश में आने के बाद उसे जो हुआ, सब मालूम हो गया। पश्चात्ताप में वह गड़ गया। उसने वहीं अपनी सारी संपत्ति ज़मींदार के सुपुर्द की और सूरदास के साथ उसके गाँव चला गया। वहाँ अन्नदान में सूरदास की मदद करने में लग गया।

जो-जो आते, उन्हें वह अन्नदान की महिमा बताता और कहता "भूखे को अन्न का दान कीजिये। मेहनत कीजिये। अन्नदान करके अपनी कमाई का सदुपयोग कीजिये।"

चन्दामामा
सुवर्ण रेखाएँ
दस कपाल
कोसल राज्य में वर्षा के न होने के कारण आदित्य महाराज कपाल मुनि की सहायता प्राप्त करने गया।
बारिश बरसाने एक तांत्रिक यज्ञ है। किन्तु ...
तत्संबंधी एक छोटी-सी बात याद नहीं आ रही है।
दस कपालों को पाँच क़तारों में रखना होगा।
एक-एक क़तार में चार कपाल ही रखने होंगे।
आहा?
कैसे?

सुवर्ण रेखाएँ
प्रश्नावली
1
बुद्ध भगवान जब कोसल राज्य के अरण्य से गुज़र रहे थे, तब अंगुलीमाल नामक भयंकर लुटेरे ने उन्हें रोका। अंगुलीमाल ने निश्चय किया कि अपनी पद्धति के अनुसार बुद्ध को भी मार डालूँगा और उनका अंगूठा अपने गले की माला में डाल लूँगा। किन्तु बुद्ध ने उसे ऐसा प्रभावित किया, जिससे उसे स्वयं अपनी गलती का एहसास हुआ। बुद्ध ने उसे सन्मार्ग पर जाने प्रोत्साहन दिया। वह एक सन्यासी बन गया।
अंगुलीमाल के नाम से पुकारे जाने के पहले उस लुटेरे का क्या नाम था ?
2
पहले पहल आस्ट्रेलिया में जाकर बसे यूरोपियन अपने साथ एक जंतु को भी ले गये। वे जंतु अब देश की फ़सलों का नाश कर रहे हैं। प्रधानतया वहाँ के किसान अपनी बकरियों और गायों के चरने के लिए जो घास उगाते हैं, वे उसका नाश कर रहे हैं। इन जंतुओं से अपने घास की रक्षा के लिए वहाँ के किसानों ने बाड़े का प्रबंध किया। उन जंतुओं का क्या नाम है?
3
लंदन के विक्टोरिया एण्ड अल्बर्ट म्यूज़ियम में असली बाघ के परिमाण में काठ से बनाया गया एक बाघ है। दिखाया गया है कि वह ब्रिटेन के एक सैनिक पर लपककर उसे मारने जा रहा है। बगल के ही हत्थे को घुमाने पर वह बाघ गुर्राता है। सैनिक पीड़ा से कराहता हुआ एक हाथ उठाता है। बाघ का यह पुतला किसका है?

एक ड्रायर में छे सफ़ेद, छे काले, कुल १२ मोजे हैं। बिजली के चले जाने से कमरे में अंधेरा हो गया। काले हों या सफ़ेद, एक जोड़ी मोजे लेना चाहें तो उनमें से कितने मोजे लेने होंगे ?
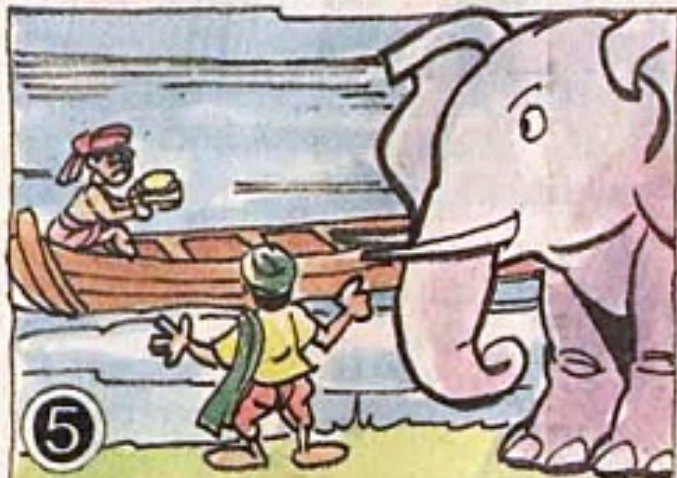
सोम की नाव तट पर पहुँची। उसने पास ही खड़े एक हाथी को देखा। उस हाथी के मालिक को वह जानता था। उस आदमी से उसने पूछा कि हाथी का क्या वज़न है? उस आदमी ने कहा कि मैं नहीं जानता कि उसका क्या वज़न है। अगर तुम बता पाओगे तो उसपर सवार होने की अनुमति दूँगा। सोम के पास ५० कि.ग्रा. तोलनेवाली 'वेयिंग मशीन' मात्र थी। तो फिर वह कैसे हाथी के वजन को तोल पाया?

एक लोहार ने तोपों के आठ गोले तैयार किये। देखने में ये सब एक समान थे। उनमें से सात समान वज़न के थे। एक मात्र बाक़ी गोलों से हल्का था। आपको एक तराज़ू दिया जाए और कहा जाए कि दो पलड़ों में वे रखे जाएँ और पता लगाएँ कि कौन-सा गोला हल्का है, तो आप क्या करेंगे? कैसे पता लगाएँगे ?

प्राचीन ईजिप्ट में मृत देहों को गाड़ते समय, उनके हाथ में चांदी व तांबे की अशर्फ़ियां रखते थे। मालूम है, ऐसा क्यों करते थे?

'स्नापी' बधाई भेजिये
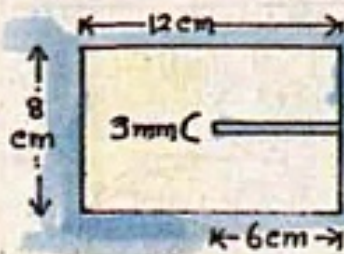
१२ से.मी. x आठ से.मी. की माप का एक घना पुट्ठा लीजिये। बीच में तीन मि.मी. की चौड़ाई से, तस्वीर में दिखाये गये अनुसार कतरिये।

६ सें.मी. ८ सें.मी. के एक और पुट्ठे को कतरिये। उसे बीच में चिपकाइये।

इस पुट्ठे के खालीपन की इस ओर तह कीजिये और उसके चारों ओर रबड़ बांड बांधिये।

रबड़ बांड से छुड़ाकर, खाली जगह को वैसे ही छोड़कर, उसपर कागज़ के दो टुकड़ों को चिपकाइये। उस कागज पर अपनी शुभ कामनाएं लिखिये।

'स्नापर' से थोड़े बड़े आकार में बधाई कार्ड तैयार कीजिये और अंदर 'स्नापर' को चिपकाइये।

अब 'स्नापर' के फ्लाप्सो के उस ओर के अंत को तह करके कार्ड को बंद करके लिफाफे में रखिये। इसे अपने मित्रों को भेजिये। आपके मित्र बहुत ही खुश होंगे।

SNAP!
BOOM!!

वान की तस्वीर ... तीन आसान क्रमों में
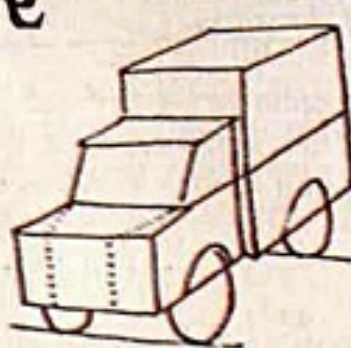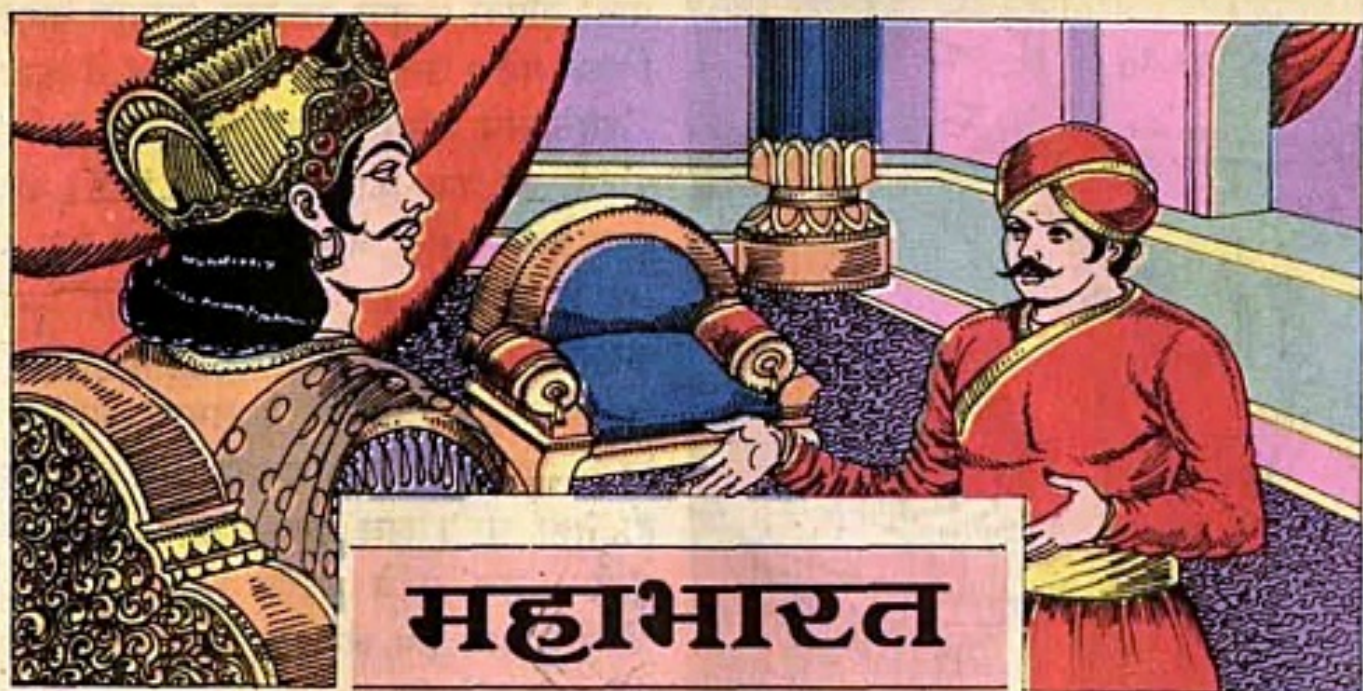
दुश्शासन से प्रेरित होकर दुर्योधन अपने पिता धृतराष्ट्र के पास गया और कहा "पिताश्री, जुए में जो भी हमने जीता, आपने खो दिया। पाँडव अवश्य ही युद्ध में हमारा सर्वनाश करेंगे। वे अति बलवान हैं। उन्हें पुनः जुआ खेलने के लिए बुलाइये। इस बार उन्हें जुए में हरायेंगे और बारह सालों तक वनवास भेजेंगे। वनवास के समाप्त होते-होते संसार के राजाओं को अपने पक्ष में कर लेंगे और युद्ध हुआ तो पाँडवों के छक्के छुडा देंगे।"

धृतराष्ट्र ने अपनी स्वीकृति दी। भीष्म, द्रोण, विदुर ने इसका विरोध किया। गांधारी ने बिल्कुल मना कर दिया। उसने स्पष्ट शब्दों में कहा कि इससे कौरवों का विनाश होगा। धृतराष्ट्र ने अपनी पत्नी से कहा कि कुल का नाश भी हो जाए, तो हो जाए, किन्तु इस जुए को रोकना मेरे बस की बात नहीं है। उसने पाँडवों को जुआ खेलने आह्वान देने प्रातिकामि को भेजा।

धर्मराज जानता था कि फिर से जुआ खेलना खतरनाक है, फिर भी अपने भाइयों और अपने परिवार को लेकर जुआ खेलने हस्तिनापुर पहुँचा।

जुआ शुरू होने के पहले शकुनि ने धर्मराज से कहा "इस बार जो जुआ खेला जानेवाला है, उसकी शर्तें यों हैं। जो हार जायेंगे, उन्हें बल्कल पहनकर बारह सालों तक वनवास करना होगा। उसकी समाप्ति के बाद एक साल अज्ञातवास करना होगा। अज्ञातवास की अवधि में अगर वे दीखें अथवा प्रकट हों तो फिर से बारह सालों का वनवास व एक साल का अज्ञातवास करना पड़ेगा। तेरह वर्षों के बाद अपने-अपने राज्यों का शासन-भार संभालने के

पत्नी द्रौपदी वल्कल पहनकर वनवास करने निकल पड़े। उन्हें देखकर दुश्शासन ने कहा "इतने लंबे समय के बाद देख रहा हूँ कि पांडवों का कष्ट-काल प्रारंभ हो गया। यह दृश्य देखकर मेरा जन्म चरितार्थ हो गया। अब से दुर्योधन का रास्ता साफ़ है। उसे रोकनेवाला कोई नहीं। ऐश्वर्य के गर्व में चूर होकर इन पांडवों ने हमारा अपमान किया। इनकी दृष्टि में हमारा कोई अस्तित्व ही नहीं था। अब इनका उचित पराभव हुआ। अब से वे अरण्य मृगों की तरह जीएँगे। अब हम जैसे संपन्न व सदृढ़ कोई नहीं रहे।" फिर उसने द्रौपदी से कहा "पांचाली, दरिद्र इन पाँडवों के साथ जाकर अरण्यों में क्यों कष्ट झेलती हो? हम कौरवों में से किसी को वरो और सुखपूर्वक राजभवन में जीवन बिताओ।"

अधिकारी हो जायेंगे।"

शकुनि की बतायी इन शर्तों को सुनकर सभा में उपस्थित सभी भयाकुल हो गये। कुछ सभासदों ने क्रोधित हो ज़ोर से चिल्लाया "धृतराष्ट्र बुद्धिहीन हो गया है। बेटा जैसा नचा रहा है, नाच रहा है। उसके हाथ का कठपुतला है।"

धर्मराज ने ये बातें सुनीं और शकुनि से कहा "राजधर्म का पालन करने की मैंने प्रतिज्ञा की। हर स्थिति में उसे निभाने के लिए कटिबद्ध होकर यहाँ आया हूँ। भले ही इसके पीछे षड्यंत्र हो, मुझे जुआ खेलना ही पड़ेगा, क्योंकि यह राजधर्म व क्षत्रिय धर्म है।"

शकुनि ने पासे फेंके। धर्मराज हारा।

शर्त के अनुसार धर्मराज, उसके भाई,

भीम ने इन बातों को सुनकर सिंह की तरह गरजते हुए कहा "अरे नीच, पापी, दुष्ट, शकुनि के खेले इस मायावी जुए के बल पर जो मुँह में आ रहा है, बक रहे हो। जब युद्ध में तेरे शरीर के अंग-अंग को तोड़ता जाऊँगा, तब उस समय मैं तुम्हें कैसे संबोधित करूँगा, किस-किस प्रकार के शब्द मेरे मुँह से निकलेंगे, सब सुनेंगे ही। केवल तुम्हें ही नहीं, बल्कि तुम्हारे आश्रय में आये सब दुष्टों का सर्वनाश करूँगा, उन्हें यमलोक भेजूँगा। यही मेरी प्रतिज्ञा है।"

दुर्योधन की ओर मुड़कर भीम ने कहा "अरे मूर्ख, अभी क्या हुआ? आगे देखना, क्या होगा। जिस दिन मैं युद्ध में तुम्हारा

संहार करूंगा तब इन सबका एक साथ उत्तर दूंगा ।"

जुए के कक्ष से बाहर आने के पहले भीम ने मुड़कर सभा-स्थल को देखकर कहा "स्मरण रखिये । इस पापी दुर्योधन को युद्ध में मैं बड़े ही भयंकर रूप से मार डालूंगा । इसके मित्र दुरभिमानी कर्ण को अर्जुन मार डालेगा तो इस कुटिल शकुनि को सहदेव । इन दुष्टों के समूह का संहार हमारा ही हाथों लिखा हुआ है । यह न ही कोई रोक पायेगा अथवा इन्हें बचा पायेगा ।" अर्जुन ने भीम को रोकते हुए कहा "व्यर्थ बातों से क्या लाभ ! चौदह सालों के बाद जो करने जा रहे हैं, अब उन्हें बताने की क्या आवश्यकता? वह भी तभी संभव हो पायेगा, जब कि ये दुष्ट हमारा राज्य हमें लौटाने से तिरस्कार कर दें । तब हाँ, अवश्य ही हम वही करेंगे, जो-जो तुमने कहा । अब शांत हो जाओ और चलो ।"

सहदेव ने शकुनि से कहा "अरे नीच, पासों से धोखा देकर तुमने अपना रंग दिखा दिया । युद्धभूमि में अपना प्रताप दिखाना । भीम के कहे अनुसार मैं तुम्हारे प्राण हरूँगा । इस बीच अपने सारे काम कर लो और मौत की प्रतीक्षा करो ।"

नकुल ने रौद्र होकर कहा "जिन-जिन्होंने इस सभा में द्रौपदी का अपमान किया, उन्हें कीडों की तरह मसल डालेंगे, मौत के घाट उतारेंगे । हम बडी-बडी बातें नहीं कर रहे हैं, सच कह रहे हैं ।"

इस प्रकार पाँडवों ने प्रतिज्ञाएँ कीं ।
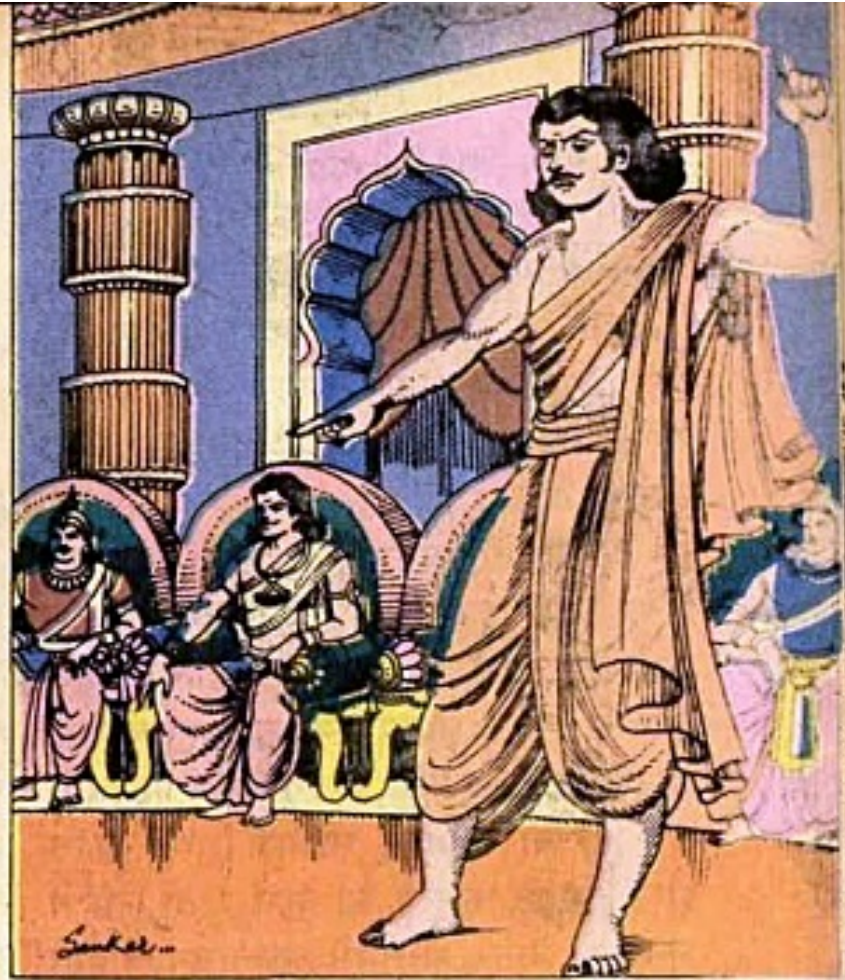
धृतराष्ट्र, भीष्म, वाह्लिक, कृपाचार्य, द्रोण, अश्वथ्थामा, विदुर, संजय आदि से विदा लेते हुए कहा "हम फिर मिलेंगे ।"

दुष्ट कौरवों से भयभीत और लोगों ने कुछ नहीं कहा । परंतु हाँ, विदुर ने डटकर धर्मराज से कहा "छल-कपट से हराये गये व्यक्ति को अपनी हार पर चिंतित होने की आवश्यकता नहीं है । अनमोल रत्न जैसे तुम्हारे भाई हैं, सगुणराशि द्रौपदी है, ज्ञानी धौम्य है । उनके होते हुए तुम्हें कोई कमी नहीं होगी । एकता-सूत्र में बंधे तुम भाइयों में कोई फूट डाल नहीं सकता । तुम लोगों को कोई जीत नहीं सकता । तुम्हारी माँ उम्र में बडी है । तुम लोगों के साथ वनवास नहीं कर पायेगी । अतः मैं उन्हें अपने यहाँ रखूँगा और उनकी देखभाल करूँगा । मेरी

बात मान जाओ । तुम लोग जाओ । तुम्हारा कल्याण हो । फिर मिलेंगे ।'' यों उसने अनेकों और हित वचन कहे ।

धर्मराज ने विदुर से कहा ''आप मेरे लिए पिता और गुरु समान हैं । हमारा हित चाहनेवालों में से हैं । आप जैसा कहेंगे, करूँगा ।''

द्रौपदी ने, अंतःपुर में कुंती, गांधारी तथा अन्य पुण्य-स्त्रीयों को प्रणाम किया । कुंती ने उससे कहा ''तुम तो सब कुछ जानती हो । पतियों के साथ पत्नी का होना सहज धर्म है । इसलिए तुम आँसू मत बहाना । अगर सचमुच तुमने क्रोध भरी दृष्टि से कौरवों को देखा होता, तो वे भस्म हो जाते । मैं तुमसे आश्वासन चाहती हूँ कि तुम सहदेव का विशेष ध्यान रखोगी । शेष चारों भाई सशक्त हैं । पर सहदेव की बात अलग है । बाल्यकाल से ही वह सुकुमार है । कष्ट सहने की उसमें शक्ति नहीं है । उसका प्रत्येक रूप से ध्यान रखना । पुत्री, धर्म की विजय होगी और तुम सबका भला होगा ।''

खुले केशों से रोती हुई द्रौपदी अंतःपुर से निकली ।

कुंती उसके साथ-साथ अपने पुत्रों के पास आयी । मुनि वेष धारण करके वन जाने के लिए वे सन्नद्ध थे । उन्हें देखकर बिलखती हुई कुंती ने कहा ''पुत्रो, आप धर्मपरायण हैं, सब अवस्थाओं में आप लोगों ने धर्म का मार्ग नहीं छोड़ा । फिर भी आपको वन जाना पड़ रहा है । ज्ञात नहीं, भगवान का आशीर्वाद आपको प्राप्त नहीं हुआ अथवा मेरी कोख में जन्म लेने के कारण यह दंड भुगत रहे हैं । मैं कल्पना भी नहीं कर सकती कि आप लोग अरण्यों में कैसे रह पायेंगे । आपकी इस दुस्थिति

को देखने के भय से ही शायद आपके पिता और उन्हीं के साथ माद्री भी दिवंगत हो गये। वे बडे भाग्यशाली हैं। मैंने बड़े-बड़े पाप किये होंगे, इसलिए यह देखने के लिए जीवित रह गयी। इसके पहले मैंने भी आपके कष्टों को बाँटा। अब मुझे अकेली छोड़कर मत जाओ। मुझे भी अपने साथ ले जाओ। इस विषम स्थिति में अनाथ रक्षक कृष्ण भी कुछ नहीं कर पाया।''

उपरांत उसने सहदेव से कहा ''तुम मत जाओ। तुम मेरे साथ रहोगे तो मुझे लगेगा कि सब पुत्र मेरे साथ हैं।'' कहकर वह लगातार रोने लगी।

विदुर ने उसे समझाया-बुझाया और अपने घर ले गया। पाँडवों ने माता के पैर छुये और वनवास के लिए निकल पड़े। खुले केश लिये द्रौपदी पाँडवों के साथ गयी। धर्मराज ने अपने मुखडे को कपड़े से छिपा लिया। अपनी भुजाओं को फैलाता हुआ भीम जाने लगा। अर्जुन रेत बिखेरता हुआ जाने लगा। नकुल ने अपने शरीर भर पर राख पोत ली। सहदेव ने अपने शरीर पर धूल फैला ली।

भीम सबसे आगे चल रहा था। बड़ी ही दीक्षा के साथ धौम्य सामगान गाता जा रहा था।

धृतराष्ट्र ने विदुर से पूछा ''पांडव वनवास कैसे गये?'' तो विदुर ने बताया कि कौन-कौन किस-प्रकार गये।

धृतराष्ट्र ने प्रश्न किया ''ऐसा क्यों गये?''

''तुम्हारे पुत्रों ने पाँडवों के प्रति घोर अन्याय किया। धर्मराज उनकी चर्या पर उनसे बहुत ही क्रोधित है। उसे डर है कि उसकी तीव्र दृष्टि से कहीं लोग राख न हो जाएँ, इसीलिए उसने अपने मुखडे को कपड़े

से छिपा लिया। भीम ने लोक को अपना भुजबल प्रदर्शित किया। अर्जुन रेत को बिखेरता गया। तद्वारा वह बताना चाहता है कि रेत को जिस प्रकार बिखेर रहा है, उसी प्रकार बाण-वर्षा करूँगा। लोगों ने नकुल की सुंदरता देखी। वह नहीं चाहता कि उसे इस स्थिति में देखकर उसपर आनेवाले कष्टों की कल्पना करके लोग कहीं चिंताग्रस्त न हो जाएँ। अपने दुख को छिपाने के लिए सहदेव ने अपने शरीर पर मिट्टी डाल ली। द्रौपदी ने गीली साड़ी पहन ली और अपने केशों को खुला रखा। वह तद्वारा बताना चाहती है कि चौदह सालों के बाद कौरवों की बहुओं की भी यही दुस्थिति होगी और वे भी इसी प्रकार रोती रहेंगी। धौम्य के हाथ में कुश थे। यह भविष्य में होनेवाले युद्ध में मृत मनुष्यों की अंतक्रियाओं की ओर संकेत है। यह जताने के लिए उसने रौद्र साम का पठन किया। राजन्, तुम्हारी दुर्बुद्धि के कारण ही भविष्य में कौरवों का नाश होकर रहेगा।''

पाँडवों के चले जाने के बाद दुर्योधन, दुश्शासन, कर्ण, शकुनि चारों द्रोण के पास गये और उनसे कहा ''गुरुवर, पाँडवों से प्राप्त इस राज्य पर आप शासन कीजिये। इसके लिए आवश्यक समस्त योग्यताएँ आपको हैं। आपसे बढ़कर कोई और योग्य नहीं हैं।''

द्रोण ने उत्तर दिया ''पाँडवों को जीतना दुस्साध्य कार्य है। किन्तु मैं दुर्योधन को छोड़ भी नहीं सकता, क्योंकि मुझपर उसका अपार भक्ति-भाव है। पाँडव नियमों का पालन करके अवश्य ही युद्ध करने आयेंगे। द्रुपद मेरे हाथों हार गया, किन्तु उसने महायज्ञ करके मुझे मार सकनेवाले पुत्र को पाया। साथ ही अर्जुन की पत्नी बनने योग्य पुत्री को भी पाया। धृष्टद्युम्न द्रौपदी के विवाह द्वारा पाँडवों का अपना हो गया। अलावा इसके, कृष्ण भी पाँडवों के पक्ष में ही है। नित्संदेह ही अर्जुन के समान का कोई अतिरथी अथवा महारथी इस लोक में है ही नहीं। यह तो सब जानते हैं कि मेरी मृत्यु धृष्टद्युम्न के हाथों निश्चित है। आप ही इन सबके उत्तरदायी हैं। मुझे न ही आपका राज्य चाहिये, न ही राज्य-सुख। अब आप कर सकते हैं, तो कीजिये परोपकार और चलिये धर्म के
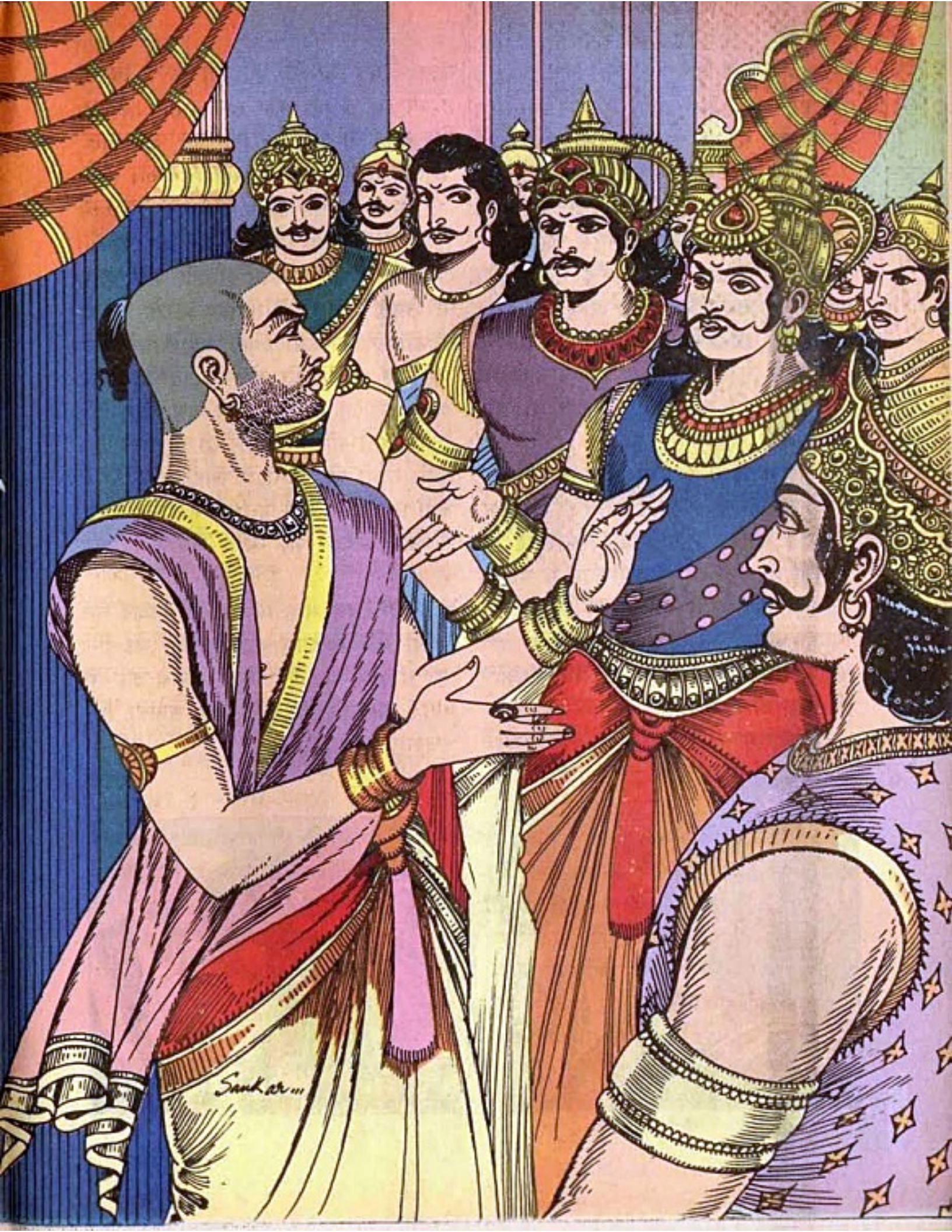
मार्ग पर। अगर आपको तात्कालिक तथा क्षणभंगुर सुख मात्र चाहिये तो भोगिये ये चौदहों साल। सुख-सागर में गोते लगाइये। इसके बाद तो कौरवों का विनाश तथ्य है।''

धृतराष्ट्र ने जब ये बातें सुनीं तो वह घबरा गया और उसने विदुर से कहा ''विदुर, द्रोणाचार्य की बातों में सच्चाई है। तुम अभी अरण्य जाओ और पाँडवों को वापस ले आओ। अगर वे आने से इनकार करते हों तो उनसे कहना कि सम्मान के बाद लौट चलें।'' उसका मन अंगारों पर खड़े बंदर की तरह छटपटा रहा था और लंबी-लंबी साँसे भर रहा था।

तब संजय ने धृतराष्ट्र से कहा ''राजन्, यह पूरा राज्य पाँडु ने जीतकर आपको दिया। उनके प्रति आपमें कृतज्ञता की भावना ही नहीं रही। कुयुक्तियों से षड्यंत्र रचकर उनके पुत्रों को आपने जंगल भेज दिया। अपना सर्वस्व खोकर वे भी चुपचाप अरण्य चले गये। अब आपको चिंतित होने की क्या आवश्यकता है?''

''चिंतित न होऊँ तो करूँ क्या? पाँडव अतिरथी हैं। युद्ध-विद्या में निष्णात हैं, अजेय हैं। ऐसे महावीरों से मैंने शत्रुता मोल ली। चिंता न करूँ तो क्या करूँ?''

''यह शत्रुता तो आपने जान-बूझकर ही मोल ली। भीष्म पितामह, गुरु द्रोण, आपके मंत्री विदुर आपको सावधान करते रहे, किन्तु आपने अनसुनी कर दी। आपके पुत्रों को न ही बुद्धि है, न ही लज्जा। प्रातिकामि को भेजकर द्रौपदी भरी सभा में लायी गयी; उसे विवस्त्र करके उसका घोर अपमान किया। और यह आपके कुल के लिए शाप सिद्ध होगा। विनाश काल जब आता है तब बुद्धि भी भ्रष्ट होती है। देवी-देवता भी उनके विरोधी हो जाते हैं। काल कभी भी किसी के सिर पर लाठी से नहीं मारता। किन्तु जब काल आसन्न होता है तब अन्याय भी न्याय समान दिखता है।''

''हाँ, पुत्र-मोह के वश में आकर मैंने किसी की भी बात नहीं सुनी। जो मेरा पुत्र चाहता था, मैंने किया। अब करें भी क्या? भगवान ही हमें बचा सकता है'' धृतराष्ट्र ने कहा।

-सशेष
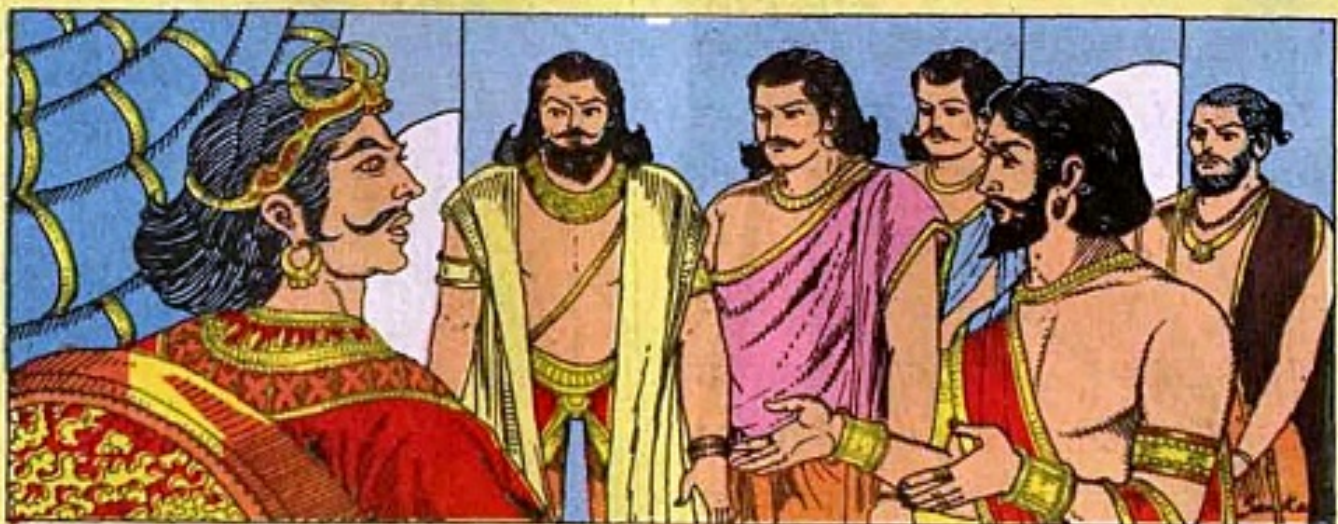
कारंज

मुँबई के समीप ही करंजिया नामक एक टापू है। यहाँ ज्यादा से ज्यादा दीखनेवाले वृक्षों को इसी टापू के नाम पर मराठी में कारंज कहकर पुकारने लगे। हिन्दी, गुजराती में भी इसे कारंज कहते हैं। बंगाली में 'कांजी' कहते हैं। आंध्र के कुछ प्रदेशों में इसे 'पुंगु' पेड़ भी कहकर -पुकारते हैं। तमिल में 'पांगं' 'पुंगु' मलयालम में 'पुंगु' के नाम से पुकारा जाता है। वृक्षशास्त्र में इसे 'पोंगामया पिन्नाटा' कहते हैं। मलयालम में 'उन्ने' नामक इसका दूसरा नाम भी है।

ये पेड़ अधिकतर समुद्री तटों पर पाये जाते हैं। रेतीले नदी-तटों और नहरों के बांधों पर ये अधिक पनपते हैं। टहनियाँ फैलकर मुकुट-सी लगती हैं। पेड़ की छाल खुरदरी होती है। ये पेड़ साल भर हरेभरे ही होते हैं। कोमल हरेरंग में हर टहनी में ५, ७, ९ के हिसाब से पत्ते होते हैं। पत्ते अंडाकार में चौड़े और नोकदार होते हैं। काठ की अलमारियों को दीमक लगने से बचाने के लिए इस कारंज के सूखे पत्तों का उपयोग होता है।

इनके फूलों का रंग होता है, कोमल लाल व बैंगनी रंग की रेखाओं से युक्त सफेद। अप्रैल-जून के बीच इसमें फूल विकसित होते हैं। सबेरे-सबेरे ज़मीन पर गिरे फूल ऐसे लगते हैं, मानों क़ालीन बिछा हो। फल दोनों तरफ होते हैं।

छाँव के लिए सड़क के दोनों ओर इसे रोपते हैं।

हमारे देश के ऋषि :

अकृतव्रण

महर्षि परशुरम के अनेकों शिष्य थे। उनमें से अकृतव्रण वे उत्तम शिष्य थे, जिन्होंने अपने गुरु की सदा परिचर्याएँ कीं। उनके साथ ही रहकर अच्छी तरह से उनकी देखभाल की।

जब एक बार परशुराम जंगल से होते हुए जा रहे थे, तब एक गुफा से दीन स्वर उन्हें सुनायी पड़ा। उन्होंने अंदर जाकर देखा। एक मुनिकुमार गुफा की दीवार से चिपक-सा गया था और रो रहा था। ऊपर टूट पड़ने के लिए एक बाघ तैयार खड़ा था। परशुराम ने बिलंब किये बिना बाण छोड़ा और बाघ को मार डाला।

दूसरे ही क्षण एक गंधर्व मृत बाघ से प्रत्यक्ष हुआ और परशुराम को प्रणाम करके बोला "आपकी कृपा से मैं आज शाप-मुक्त हुआ हूँ। आपका मैं कृतज्ञ हूँ" कहकर अदृश्य हो गया। मुनिकुमार ने ऋषि को साष्टांग नमस्कार किया। ऋषि पुंगव के कारण चूँकि वह बिना किसी घाव के जीवित हुआ, अतः उसका नाम पड़ा अकृतव्रण। ऋषि ने उस मुनिकुमार को आशीर्वाद दिया और उसे अपना शिष्य बनाया। परशुराम ने उस बालक को केवल वेद-वेदांग ही नही सिखाया, बल्कि विविध शस्त्र व शास्त्रों की भी शिक्षा दी।

कुरुवीर भीष्म ने भी परशुराम से ही विद्याभ्यास किया। एक बार भीष्म काशी के राजा से घोषित स्वयंवर में उपस्थित होने गये। प्रत्यर्थी राजकुमारों को हराकर, अपने भाई विचित्रवीर्य के लिए, काशी राजा की पुत्रियाँ अंबा, अंबिका, अंबालिका को अपना राज्य ले आये। जब अंबा ने कहा कि वह साल्वराजा को चाहती है, तो भीष्म ने उसे जाने दिया। किन्तु साल्वराजा ने उससे विवाह करने से इनकार कर दिया तो वह लौटी और विचित्रवीर्य से विवाह करने की अपनी इच्छा व्यक्त की। विचित्रवीर्य ने उसके इस प्रस्ताव को ठुकरा दिया। उसकी दृष्टि में उसकी इस दीन स्थिति के कारक भीष्म हैं, इसलिए उसने भीष्म से अनुरोध किया कि वे स्वयं उससे विवाह करे। किन्तु भीष्म ने आजीवन ब्रह्मचर्य का व्रत ले रखा था, इसलिए उन्होंने भी अपनी अशक्तता व्यक्त की।

भीष्म से प्रतीकार लेने के उद्देश्य से उसने कितने ही राजकुमारों की सहायता मांगी। किन्तु भीष्म का सामना करने के लिए कोई भी तैयार नहीं था। अंत में अंबा, परशुराम के पास गयी और अपना दुखड़ा सुनाया। परशुराम उसे लेकर अपने शिष्य भीष्म के पास आये और उनसे कहा कि वह अंबा से विवाह करे। भीष्म ने जब अस्वीकार कर दिया तो वे युद्ध करने उद्यत हो गये।

अकृतव्रण, परशुराम के रथ-सारथी थे। कुरुक्षेत्र में परशुराम और भीष्म के मध्य बहुत दिनों तक युद्ध चलता रहा। किन्तु दोनों एक-दूसरे पर विजय नहीं पा सके। अंत में नारद तथा देवताओं ने युद्ध रोका। दोनों की न ही जीत हुई, न हार। यों युद्ध समाप्त हुआ।

गुरु के आशीर्वाद पाकर, उत्तरोत्तर अकृतव्रण महान ऋषि हुए।

क्या तुम जानते हो ?

१. 'डेड सी' की गहराई कितनी है?

२. ओलंपिक झंडे में भिन्न रंगों से युक्त सात वलय हैं। वे कौन-से रंग हैं?

३. पौधों के विकास को मापनेवाले साधन का आविष्कार एक भारतीय ने किया। उनका क्या नाम है?

४. १९०६ में नोबेल पुरस्कार प्राप्त एक वैज्ञानिक के आठ शिष्य हैं। बाद इन आठों ने यह पुरस्कार पाया। ऐसे इस विशिष्ट व्यक्ति का क्या नाम है?

५. राजा अंधा है, इसलिए रानी ने भी अपनी आँखों पर पट्टी बांध ली। उस राजा व रानी के नाम क्या हैं ?

६. 'देशबंधु' 'दीनबंधु' के नाम से पुकारे गये वे व्यक्ति कौन थे ?

७. रोमन उल्लू को विनाश का चिह्न मानते थे। फिर मक्खियों के बारे में उनकी क्या राय थी?

८. भारत के राष्ट्रीय झंडे की रूप-कल्पना की भिकिंजी कामा ने, क्या जानते हो, अमेरीकी झंडे की रूप-कल्पना किसने की?

९. बाघ राष्ट्रीय मृग के रूप में कब स्वीकृत हुआ?

१०. उड़ती तश्तरियाँ पहली-पहली बार कब देखी गयीं?

११. इटली की प्रथम महिला डाक्टर ने एक और क्षेत्र में भी विशिष्ट काम किया। उनका क्या नाम है?

१२. जेल में रहते हुए जवाहरलाल नेहरू ने 'डिस्कवरी आफ़ इंडिया' की रचना की। किस जेल में रहते हुए उन्होंने यह ग्रंथ रचा?

१३. 'पीपुल्स रिपब्लिक आफ़ चैना' की घोषणा माओ से टुंग ने कब की?

१४. 'टेंपुल आफ़ हेवेन (स्वर्ग मंदिर) कहाँ है?

१५. सम्राट अकबर के राजस्व शाखा के मंत्री कौन थे ?

उत्तर

१. ३९५.९ मीटर

२. नील, पीला, हरा, लाल, काला। सब देशों के झंडों में इनमें से कम से कम एक रंग तो होता ही है।

३. जगदीश चंद्रबोस

४. जे.जे. थाम्सन

५. महाभारत के धृतराष्ट्र और गांधारी

६. देशबंधु - सी.आर. दास, दीनबंधु - सी.एफ़. अंड्रूस

७. भाग्य का चिह्न

८. फिलाडेल्फिया के बेटसीरास

९. १९७२ में

१०. १९४७ जून, २४

११. मेरिया मौटसोरी, विद्या के क्षेत्र में

१२. अहमदनगर किला

१३. १९४९ सितंबर २१

१४. चीन के बीजिंग नगर में

१५. तोडरमल

सुवर्ण-प्रश्नावली - संख्या २ के उत्तर

१ अंकोर - अंकोर नगर का निर्माण किया राजा विजयवर्मा व उनके वारिसों ने । ३०० सालों तक यह वैभवपूर्ण था । शासक व जनता ने इसे जब छोड़ दिया तब यह वृक्षों से घिर गया और जंगल बन गया । लगभग ५०० साल बाद हेनरी मौहार द्वारा यह खोज निकाला गया । नीचे दिखायी गयी मूर्ति गरुड की है ।

२ कहीं भी नहीं है । दोदो पक्षी का नाश क़रीबन् २०० साल पहले-ही हो गया ।

३ इस क्रम में दिखाये गये सभी अंक एक से प्रारंभ होनेवाले बेसि संख्याओं के दर्पण के रूप हैं ।

४ तमाशा-महाराष्ट्र का प्रसिद्ध गेय नृत्य

५ मछली को - अंदमान के शिकारी बाणों से मछलियों का शिकार करते हैं ।

६ एक घंटे के बाद भी मूर्ति पानी के ऊपरी सतह पर ही रहती है । पानी की सतह के बढ़ने पर, साथ-साथ नाव भी ऊपर उठती है ।

पिशाचों का रसोइया

शिव धनवानों के घरों व इतर शुभ कार्यों के अवसरों पर रसोई बनाता था और अपनी जीविका चला रहा था । सीता उसकी इकलौती पुत्री थी । उसके पाँचवें साल में ही उसकी माँ मर चुकी थी । किसी के घर काम पर जब जाता, तब अपनी बेटी को भी अपने साथ ले जाता था । पिता रसोई बनाता रहता और बेटी ध्यान से देखती रहती । दोनों एक वक़्त का खाना वहीं खाते और लौटते समय भोजन-सामग्री गठरी में बांधकर घर ले आते थे । जिस दिन कहीं काम नहीं होता, उस दिन खुद रसोई बनाकर शिव अपनी बेटी को अपने ही हाथों बड़े प्यार से खिलाता था । यही आदत सालों भर जारी रही, जिससे सीता रसोई बनाने के काम में कोई अभिरुचि ही दिखाने नहीं लगी ।

रामू, शिव के दोस्त का इकलौता बेटा था । वे भी बहुत ही ग़रीब थे । इसलिए शिव ने उसके माँ-बाप के मर जाने के बाद रामू को अपने ही घर में आश्रय दिया । वह उन्हीं के साथ रहने लगा । थोड़े ही दिनों में रामू ने भी रसोई का काम सीख लिया । वह शिव को बिठाकर खुद रसोई का काम संभालने लगा ।

शिव, रामू से बहुत ही प्रभावित हुआ । उसने एक दिन रामू से कहा "अरे रामू, सीता के पैदा होते ही हम दोनों दोस्तों ने ठान लिया था कि सीता तुम्हारी पत्नी होगी । तुम दोनों की शादी हो जाए तो मैं निश्चिंत हो जाऊँगा ।"

अति सुँदर सीता रामू के हृदय में जगह बना चुकी थी । वह उसे चाहने लगा, इसलिए उसने शिव के प्रस्ताव को सहर्ष मान लिया । उसने शिव से कहा "जैसी आपकी इच्छा ।"

इसके दो महीनों के बाद शिव-सीता का बिवाह हुआ । दिल की धडकन बंद हो जाने से एक साल ही के अंदर शिव मर गया । इस कारण रसोई बनाने का काम और पितृहीन सीता की देखभाल की जिम्मेदारी रामू को अकेले ही संभालनी पड़ी ।

भोजन-प्रिय सीता जब खाने लगती, तब अक्सर कहा करती "बैंगन की तरकारी में मिर्च कम है, नारियल की चटनी अच्छी है, पर इमली के बदले इसमें नींबू निचोडा जाता तो और रुचिकर होता । ऐसा न करके ऐसा करते तो अच्छा होता" कहकर वह टिप्पणियाँ करती जाती थी ।

आराम से बैठकर खाती जानेवाली सीता की इन फालतू बातों से राम बहुत नाराज़ होता था ।

रामू अपने जन्म-दिन पर उसे बहुत ही पसंद पकवान बनाकर खाना चाहता था । वह चाहता था कि सीता खुद इन्हें पकाये । किन्तु सर-दर्द का बहाना करके बात टाल गयी । रामू ने सोचा, ऐसे तो मैं ही रोज़ रसोई बना रहा हूँ, आज भी अपने जन्म-दिन पर अपनी पसंद के पकवान बनाऊँगा ।

उन्हें खाने के लिए बैठी सीता ने उन पकवानों को चखा और बोली "ये तो स्वादिष्ट हैं ही नहीं । यह तो खट्टा है, इसमें नमक ज़्यादा पड़ गया, लगता है, इसमें शक्कर बहुत ड़ाल दिया ।"

अपने हाथों बनाये गये पकवानों को खाने के लिए रामू बड़े उत्साह से बैठा था । पत्नी की इन टिप्पणियों से उसमें निरुत्साह फैल गया । उसे उसकी बातें कांटे की तरह चुभ गयीं । वह नाराज़ हो उठा ।

रामू ने तुरंत थाली को सरका दिया और ज़ोर से बोला "अरी ओ पिशाचिन, अब तक तुमपर तरस खाकर चुपचाप सब कुछ सहता रहा । अब मुझसे सहा नहीं जायेगा । पकाकर तुम्हें खिलाने से तो अच्छा यही है कि जंगल चला जाऊँ और जंगल में पिशाचों को रसोई बनाकर खिलाऊँ । उसी में अधिक सुख होगा । अभी निकल रहा हूँ । इस क्षण से खाओगी या उपवास रखोगी, इससे मेरा कोई लेना-देना नहीं है ।" कहकर उसने हाथ धो लिया और कुर्ता पहनकर गली में चला गया।

पति को इतना नाराज़ होते हुए सीता ने कभी नहीं देखा था । वह बहुत घबरा गयी । उठी और बाहर आकर देखा तो गली के नुक्कड़ से मुड़कर वह अदृश्य हो गया था । अब वह कर भी क्या सकती थी? उसने हाथ धो डाले और पलंग पर लेटकर रोने लगी ।

तीव्र रूप से क्रोधित रामू थोड़ी ही देर में जंगल पहुँचा । थोड़ी दूर तक गया कि नहीं, पीछे से किचकिच की ध्वनि सुनायी पड़ी । उसने सोचा, बंदरों का झुंड होगा । पीछे मुड़ा तो दो नाटे पिशाच उसके सामने प्रत्यक्ष हुए । किचकिच करते हुए हँसते हुए उन्होंने कहा "बड़े प्यार से यहाँ पधारे रसोइये को, शाकाहारी पिशाचों का स्वागत, सुस्वागत ।"

रामू हिम्मतवर था, इसलिए पिशाचों को देखकर उसे थोड़ा-सा भी डर नहीं लगा । उसने कहा "मैं तुम्हारे लिए थोड़े ही यहाँ आया हूँ । तुमको कैसे मालूम कि मैं रसोई बनाता हूँ?"

उसके इस प्रश्न पर दोनों ने हँसकर कहा "यही तो हमारा बडप्पन है । आज की आधी रात को हमारे यजमान की पुत्री का विवाह बड़े वैभव से संपन्न होनेवाला है। हम चाहते थे कि इस बार रसोई के कार्यक्रम में परिवर्तन करें। रसोइया पिशाचों से नहीं, मानव रसोइयों से हम पकवान बनाना चाहते हैं। यही हमारे यजमान की भी इच्छा है। अब तुम हमारे पीछे-पीछे आओ । तुम्हें अपने यजमान के पास ले जायेंगे ।"

इसके बाद वे पिशाच अंधेरे में उसे घनी झाडियों के पास ले गये और अपने यजमान के सामने खड़ा किया । पिशाचों के बताने पर यजमान को मालूम हुआ कि रामू कौन है । तब यजमान ने कहा "ऐ रसोइये, इस शादी के अवसर पर रसोई का पूरा भार तुम्हीं पर है । रसोई दुल्हेवालों को पसंद आये तो बहुत-सी भेंटें देंगे ।"

रामू ने गर्व से कहा "भेंटों की बात रहने दीजिये । रसोई के लिए ज़रूरी चीज़ों की व्यवस्था होगी कि नहीं ।"

उसके गर्व पर चिढ़ती हुई यजमान की पत्नी पिशाचिन ने कहा "उनकी कोई कमी नहीं है । इस भोज पर श्रेष्ठ मिठाइयाँ व नमकीन पदार्थ बनाने होंगे । तुम तो

हम पिशाचों के पकवानों के बारे में नहीं जानते हो ना? बताती हूँ, सुनो। हम अरहर व उडद का दाल मिलाकर पूरन पूडी बनाते हैं। अरहर के दाल में थोड़ी-सी मेंथी मिलाकर बडे बनाते हैं। उस प्रकार तुमने स्वादिष्ट पकवान बनाया तो कोई बात नहीं। तुम्हारी तारीफ़ करेंगे, भेंटें देंगे। अगर ऐसा करने में तुम नाक़ामयाब हुए तो तुम्हारे टुकडे-टुकडे करेंगे और मिर्च-मसाला ड़ालकर हमारे पड़ोसी मांसाहारी पिशाचों को खिलाएँगे। सावधान।''

उसकी इन बातों से रामू अचेत-सा हो गया। अब उसे पिशाचों से ड़र लगने लगा। पर इस हालत में वह कर भी क्या सकता था। पिशाचिन के कहे मुताबिक भिगोये हुए अरहर की दाल को और कच्चे उडद की दाल को मिलाया और खूब पीसा। फिर बडे बनाये। काम पूरा हो जाने के बाद वह दूर जा बैठा। झपकी लेने लगा। इतने में पिशाचों की शादी का कार्यक्रम शुरू हो गया। तीसरा पहर बीतते ही कहीं से और बहुत-से पिशाच आये। उनकी चिल्लाहटों से उसकी नींद उखड़ गयी।

दुल्हा पिशाच रामू के बनाये पकवानों को खाता हुआ बोला ''पूरन पूडी व वड़े बहुत ही स्वादिष्ट हैं। किसने बनाया?'' यजमान पिशाच ने अपना रोब जमाते हुए कहा ''रसोई बनाने एक आदमी को बुलवाया है। उसी ने बनाया।''

दुल्हा पिशाच आश्चर्य प्रकट करता हुआ बोला ''उस रसोइये को अपनी बेटी के साथ दहेज में भेजिये। यही मेरी चाह है।''

यजमान पिशाच ने खुश होते हुए कहा, ''यह कोई बड़ी बात नही है। ज़रूर भेजूँगा।'' उसने नाटे पिशाचों से रामू को बुला लाने को कहा।

यह सब सुनते हुए रामू काँप उठा और अपने आप बड़बड़ाने लगा ''हे भगवान, अब क्या करूँ?'' भगवान का नाम जैसे ही लिया, उसे बजरंगबली का स्मरण आया। वह अपने यहाँ हर दिन हनुमान के मंदिर में जाता था और हनुमान चालीसा पढ़ते हुए सुनता था। पर उसे उसकी प्रथम पंक्ति ही याद थी। वह भी 'श्री आँजनेयं'। उसी की तरफ़ दौडते हुए आये नाटे पिशाचों

की ओर उसने नाराज़ी से देखा। आँखें बंद कर लीं और हाथ जोड़कर 'श्री आँजनेयं' कहकर ज़ोर से चिल्लाने लगा। वह दुहराता गया।

पाँच मिनिटों तक लगातार दुहराते हुए रामू को लगा कि वहाँ कोई नहीं है। चुप्पी ही चुप्पी है। उसने आँख खोलकर देखा। कहीं भी पिशाचों की साया भी नहीं है। सूर्योदय भी हो रहा है।

बहुत ही आनंदित होते हुए उसने 'श्री आँजनेयं' कहकर ज़ोर से चिल्लाया और घर निकल पड़ा। जंगल पार करके आये रामू को सिर झुकाकर आती सीता दिखायी पड़ी। उसने आश्चर्य से पूछा "कहाँ जा रही हो?"

पति का कंठस्वर सुनते ही सीता ने अपना सर उठाया। आश्चर्य व आनंद से आँसू बहाती हुई वह रामू के पास आयी। पत्नी को सांत्वना देते हुए रामू ने कहा "रोना मत। बताना तो सही, जंगल की तरफ़ क्यों जा रही हो?"

"तुम्हारे लिए ही आ रही थी। तुमने कहा था न कि जंगल में पिशाचों के लिए रसोई बनाना ही बेहत्तर है। इसलिए सोचा, शायद तुम जंगल में होगे।" आंचल से आँसू पोछती हुई बोली।

उसकी बातें सुनकर रामू ने लंबी सांस लेते हुए कहा "वह इच्छा भी पूरी कर ली। उन पागल पिशाचों के लिए रसोई बनाने से तो अच्छा यही है कि तुम्हें बनाकर खिलाऊँ।"

सीता ने तुरंत पति का हाथ पकड़कर कहा "अब से मेरा बनाया हुआ भोजन ही करोगे। कहीं तुम रसोई बनाने जाओगे, तब मैं भी साथ आऊँगी और तुम्हारी सहायता करूँगी।"

पत्नी की बातों पर प्रसन्न रामू, रास्ते भर अपने अनुभवों का विवरण देता रहा। आख़िर दोनों घर पहुँचे।

सब कुछ जानने के बाद सीता ने, रामू से कहा "अच्छा हुआ, आँजनेय स्वामी की दया से तुम बच गये। नहीं तो मेरा क्या हो जाता?" कहती हुई उसने अपने मंगलसूत्र को अपनी आँखों से लगा लिया।

समरस की नादानी

समरस जा रहा था भुवनगिरि से रामगिरि। बीच में पड़नेवाले जंगल में चोरों का भय था। इसलिए उसने अपने हाथ में लाठी संभाली और निकला। जब वह बीच जंगल में पहुँचा, तब चार मज़बूत चोर पेड़ों के पीछे से आये और उसे रोका। समरस ने धैर्य से उनका सामना किया। जो मुठभेड़ हुई, उसमें समरस व चोर भी घायल हुए। जो भी हो, आख़िर चोरों ने समरस को पकड़ लिया और पेड़ से बांध दिया। उन्होंने उसके कपड़े ढूँढ़े तो उन्हें मिले सिर्फ़ तांबे के दस सिक्के।

चोरों का सरदार निराश होकर बोला "इतनी बडी लाठी हाथ में लिये आते हुए देखकर हमने समझा था कि तुम्हारे पास काफ़ी धन होगा। अगर हमें पहले ही मालूम हो जाता कि तुम्हारे पास केवल तांबे के दस सिक्के ही हैं, तो तुम्हारे पास आते तक न थे। तुमसे यों घायल भी न होते।" दर्द के कारण कराहते हुए उसने कहा।

चारों चोरों से मार खाने के कारण, समरस ने भी दर्द से कराहते हुए कहा "सुना कि चोर अक्लमंद होते हैं। लूटे गये लोगों की खूब परीक्षा लेते हैं; पूरा शरीर ढूँढते हैं। आप तो शरीर से मज़बूत हैं, पर आप में रत्ती भर भी अक्ल नहीं है। आप लोगों ने तो मेरी पगड़ी की बात ही भुला दी। अगर मुझे मालूम होता कि आप लोगों को मेरी पगड़ी से कुछ लेना-देना नहीं है तो मैं भी इस तरह लड़ाई न करता। आपके हाथों इस तरह पिटा न जाता।"

चोरों ने तुरंत उसकी पगड़ी उतारी। उसमें चाँदी की जो अशर्फ़ियाँ थीं, ले लीं और वहाँ से चलते बने।

- रामकृष्ण

अच्छाई का फल

आनंदपुर में कांतिवर्मा नामक एक संपन्न रहा करता था । उसकी संतान नहीं थी, जिसका उसे अपार दुख था ।

उस गाँव में एक बार एक योगी आया । वह सदा भ्रमण करता रहता था । किसी भी गाँव में तीन दिनों से ज़्यादा नहीं ठहरता । उससे प्रसाद पाने के लिए भीड़ लगती थी । उस प्रसाद की महमिा में लोगों का अगाध विश्वास था ।

कांतिवर्मा उस योगी से मिला । अपनी संतानहीनता के बारे में बताया । उस समय योगी के हाथ में दूध का गिलास था । उस दूध में से थोड़ा-सा दूध उसने एक दोने में ड़ाला और उसे देते हुए कहा "इस दूध को तुम्हारी पत्नी एक घूँट में ही पी जायेगी तो तुम्हारी इच्छा पूरी होगी ।"

कांतिवर्मा ने उसे अपनी पत्नी को देते हुए कहा "इसे एक घूँट में पी जाओ" कांतिवर्मा की पत्नी उसे अपने पूजा-गृह में ले गयी । भगवान के सामने नैवेद्य के लिए रखा और फिर उसे अपनी आँखों से छूया। उसने दो घूँटों में उसे पिया ।

बाद वह गर्भवती बनी । उसकी दो पुत्रियाँ हुईं । दोनों बच्चियाँ बड़ी ही सुंदर थीं । जब वे ज़मीन पर रेंगने की आयु की हो गयीं, तब जाकर मालूम हुआ कि उनका एक-एक पैर कमज़ोर है । अपाहिज होने की वजह से वे ठीक तरह से चल नहीं पाती थीं ।

कांतिवर्मा ने उनकी चिकित्सा के लिए पैसा पानी की तरह बहाया । किन्तु कोई फ़ायदा नहीं हुआ । बच्चियाँ देखने में तारों की तरह चमकती थीं । अपने अपाहिजपन पर वे शरमाती थीं । उन्हें भय होता था कि कहीं कोई देख लेगा । लड़का लंगड़ा हो भी तो इतना दुख नहीं होता । पर ये

पचीस वर्ष पूर्व 'चन्दामामा' में प्रकाशित कहानी

बेचारी लड़कियाँ थीं।

फिर भी कांतिवर्मा अपनी लड़कियों की देखभाल अच्छी तरह से करता था।

बारह सालों के बाद फिर से वह योगी उस गाँव में आया। कांतिवर्मा ने योगी का दर्शन किया और कहा "स्वामी, आपके अनुग्रह से मेरी दो लड़कियाँ हुईं। पर, वे अपाहिज हैं। उनके भविष्य की कल्पना मात्र से ड़र रहा हूँ। मुझपर कृपा कीजिये और उनकी इस कमी को दूर कीजिये।" उसने बड़े विनय से प्रार्थना की।

योगी कुछ समय तक आँखें बंद करके सोचता रहा। फिर कहा "मैंने जैसा करने को कहा था, वैसा तुम्हारी पत्नी ने नहीं किया, इसलिए यह समस्या उत्पन्न हो गयी। मेरे पास इस केले के अलावा और कुछ नहीं है।" कहते हुए उसने केले का छिलका निकाला और केले का छोटा-सा भाग अपने मुँह में ड़ाल लिया। बाकी केला कांतिवर्मा को देते हुए कहा "इसे जिसे देना चाहते हो, दे दो।" उसे और कुछ बोलने नहीं दिया और वहाँ से भेज दिया।

कांतिवर्मा निर्णय नहीं कर पा रहा था कि यह केला दोनों बेटियों में से किसे दूँ? मन ही मन सोचता हुआ वह घर की तरफ़ जाने लगा। वह सोचने लगा कि जब कि योगी जानते हैं कि दोनों अपाहिज हैं, तो किसी एक ही को प्रसाद क्यों दिया? इस प्रसाद से एक ही लड़की ठीक हो गयी तो इससे दूसरी लड़की का मन कितना दुखेगा। अगर ऐसा हुआ तो उसे स्वयं भी कितना दुख होगा।

इस प्रकार सोच में पड़कर जाते हुए कांतिवर्मा को किसी की रुलाई सुनायी पड़ी। उसने सिर उठाकर देखा। एक युवती कुएँ के पास बैठकर रो रही थी। एक युवक उसे आश्वासन देता हुआ कुछ कह रहा था। कांतिवर्मा को पास ही खड़े देखकर उस युवक ने उससे कहा "महाशय, आप ज़रा इसे समझाइये। कुएँ में कूदकर मरना चाहती है।"

"असल में बात क्या है?" कांतिवर्मा ने उस युवक से पूछा। युवक ने कहा "यह युवती बचपन में ही पक्षाघात का शिकार हो गयी। इससे उसका बायाँ और दायाँ हाथ चेतना रहित हो गये। इससे कोई शादी नहीं करेगा किन्तु मैंने ही इसपर तरस खाकर इससे शादी की। मैं कोई

धनी नहीं हूँ । मेहनत करने पर ही पेट भर सकता हूँ । जहाँ तक हो सके, मैं अपनी पत्नी की सेवा-शुश्रूषा करके अपने काम पर निकल जाता हूँ ।

इधर कुछ दिनों से इसको लग रहा है कि इसके कारण मुझे बहुत कष्ट झेलने पड़ रहे हैं । इससे यह सहा नहीं जा रहा है । मैं आराम से बैठी रहती हूँ और पूरे काम मेरे पति ही करते रहें, यह इसे बिल्कुल अच्छा नहीं लग रहा है । इसने निश्चय कर लिया कि आत्महत्या कर लूँ तो मेरा पति किसी और स्त्री से शादी कर सकेगा और सुखपूर्वक अपना जीवन बिता सकेगा ।

मैं जानता हूँ कि यह अपाहिज है । यह सच्चाई जानकर भी मैंने इससे शादी की । अगर यह खुदकुशी कर लेगी तो मैं भी ज़िन्दा नहीं रहूँगा । आप यह सत्य बताकर इसे आत्महत्या करने से रोकिये ।''

योगी का दिया प्रसाद कांतिवर्मा ने उस युवती को दिया । उन दंपतियों के कष्टों को दूर करने की तीव्र इच्छा से प्रेरित होकर उसने ऐसा किया । उसने उस युवती से कहा ''यह केला खाओ । बाद मैं तुम्हें उचित सलाह दूँगा ।''

उसने केला खाया । फ़ौरन उसमें बहुत ही बड़ा परिवर्तन हुआ । वह तुरंत उठ खड़ी हुई और दोनों हाथ जोड़कर कांतिवर्मा को प्रणाम किया । उसके पति के आनंद और आश्चर्य की सीमा न रही ।

''तुम लोगों के कष्ट दूर हो गये । अब जाओ'' कहकर कांतिवर्मा ने उन्हें बिदा किया और स्वयं जाने लगा । उसने जो चाहा था, वह तो पूरा नहीं हुआ, पर उसे इस बात की खुशी थी कि एक परिवार का उद्धार उसके कारण हुआ । अगर वह केले का हिस्सा अपनी एक ही बेटी को देता तो वह ठीक हो जाती, परंतु दूसरी बेटी अपाहिज ही रह जाती, जिसे देखकर मन को धक्का लगता । इस धक्के से वह बच तो गया, इसकी उसे तृप्ति थी । जब वह घर पहुँचा तो दोनों बेटियाँ दौड़ी-दौड़ी उसके सामने आयीं । यह चमत्कार देखकर उसे आश्चर्य हुआ, साथ ही आनंद भी,जो वर्णनातीत है ।

फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता :: पुरस्कार १००

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ, अक्तूबर, १९९६ के अंक में प्रकाशित की जाएँगी।

MAHANTESH C. MORABAD

MAHANTESH C. MORABAD

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ एक शब्द या छोटे वाक्य में हों। ★ १० अगस्त, '९६ तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए। ★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) रु. १००/- का पुरस्कार दिया जायेगा। ★ दोनों परिचयोक्तियाँ केवल कार्ड पर लिखकर इस पते पर भेजें।

चन्दामामा, चन्दामामा फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता, मद्रास-२६.

जून, १९९६, की प्रतियोगिता के परिणाम

पहला फोटो : **धर्मवीर**

दूसरा फोटो : **कर्मवीर**

प्रेषक : **आकाशदीप**

फ्लाट सं - ८, नौवीं मंजिल ५, लोयर रोडान गली, कलकत्ता - ७०० ०२०.

चन्दामामा

भारत में वार्षिक चन्दा : रु. ७२/-

चन्दा भेजने का पता :

डाल्टन एजन्सीज़, चन्दामामा बिल्डिंग्ज़, वडपलनी, मद्रास-६०० ०२६

Printed by B.V. REDDI at Prasad Process private Ltd., 188, N.S.K. Salai, Madras 600 026 (India) and Published by B. VISHWANATHA REDDI on behalf of CHANDAMAMA PUBLICATIONS, Chandamama Buildings, Vadapalani, Madras 600 026 (India), Controlling Editor: NAGI REDDI.

CHANDAMAMA (Hindi) August 1996 Regd. No. M. 5452